भारतीय ज्ञानपीठ की एक और नयी पहल

छह युवा कथाकारों के पहले कथा-संग्रह का सेट

भीतर का वक्त : अल्पना मिश्र

अल्पना मिश्र की कहानियाँ जिस मितव्ययिता और सहज सादगी से सम्बन्धों और स्थितियों की बाहरी दुनिया से 'भीतर' को देखती हैं वह आज के स्त्री मन में हो रहे बड़े परिवर्तन की ओर संकेत करती हैं।

—कृष्णा सोबती (प्रख्यात कथाकार और विचारक)

पौ फटने से पहले : अरुण कुमार 'असफल'

लेखक का विषयवस्तु सम्बन्धी वैविध्य और अनुभव की विस्तीर्णता--और उन अनुभवों को सहज कल्पनाशीलता के सहारे अपनी खास शैली में कहानी बना देने की क्षमता विस्मयजनक रूप से एक नयेपन और ताजगी का एहसास कराती है।...

—श्रीलाल शुक्ल (प्रतिष्ठित व्यंग्यकार और उपन्यासकार)

मेरी नाप के कपड़े : कविता

कविता की कहानियों को पढ़ना एक युवा स्त्री के मानसिक भूगोल के अनुसंधान और घनिष्ठ अपरिचय को जानने के रोमांच से गुजरना है। कविता की कहानियों को पढ़ना 'नयी लड़की' को जानना है।

—राजेन्द्र यादव (महत्वपूर्ण लेखक, सम्पादक और चिन्तक)

बहेलियों के बीच : श्यामल बिहारी महतो

ये कहानियाँ श्रमिकों के जद्दोजहद-भरे जीवन पर आधारित हैं। लेखक ने जिन अभावों और मुश्किलों में अपना जीवन गुजारा है और अपने आसपास जो देखा-सुना है, उसे अपनी कहानियों में शब्दशः लिखने की कोशिश की है। संवेदनात्मक कथातत्व इन्हें गहराई प्रदान करता है।

—कमलेश्वर (प्रख्यात कथाकार, लेखक और सम्पादक)

कोई भी दिन : पंखुरी सिन्हा

पंखुरी सिन्हा की कहानियों को बहुत कुछ कहना चाहने की इच्छा की कहानियाँ कहा जा सकता है। कथाकार परिवेश को, परिवर्तन को, विघटन को, निजी-अनिजी, अमूर्त, अभौतिक, उदात्त सभी को पहचानती-रेखांकित करती हुई अपनी कथावस्तु के सन्दर्भ से कहीं ज्यादा कहना चाहती है।...

—राजी सेठ (प्रख्यात कथाकार, लेखिका और चिन्तक)

राजा, कोयल और तन्दूर : पराग कुमार मांदले

लेखक का रचना-संसार सिमटा हुआ न होकर स्वयं को विस्तार देता अपनी गहन रचना-दृष्टि का उत्स अन्वेषित करता है, जो उसकी अभिव्यक्ति की निष्ठा के प्रति हमें आश्वस्त ही नहीं करता, उसकी अप्रतिम सम्भावनाओं को भी रेखांकित करता है।

—चित्रा मुद्गल (समर्थ लेखिका तथा विचारक)

(प्रत्येक सजिल्द 95 रु. पेपरबैक 50 रु.)

भारतीय ज्ञानपीठ

पुस्तक-सूची : जनवरी, 2006

विषय-क्रम

परिषद् पब्लिशिंग हाऊस द्वारा प्रकाशित
लेखक की अन्य रचनाएँ

(1) भगवान् महावीर

(2) वीर पाठावली

(3) विशाल जैन संघ

(4) **The Religion of Ahimsa.**

मूल्य :— 2 रु०

मुद्रक :— एन० आर० प्रिंटिंग प्रेस, अनाज मन्डी, फिल्मिस्तान
के पास, बाड़ा हिन्दूराव दिल्ली—६

Jain Tirath Aur Unki Yatra; Shri Kamta Prasad Jain;

Rs. 2/-

दो शब्द

श्री दि० जैन तीर्थों का इतिहास अज्ञात है। प्रस्तुत पुस्तक भी उसकी पूर्ति नहीं करती। इसमें केवल तीर्थों का महत्व और उनका सामान्य परिचय कराया गया है, जिसके पढ़ने से तीर्थयात्रा का लाभ सुविधा और महत्व स्पष्ट हो जाता है। तीर्थों का इतिहास लिखने के लिए पर्याप्त सामग्री अपेक्षित है। पहले प्रत्येक तीर्थ विषयक साहित्योल्लेख ग्रन्थ, प्रशस्तियां, शिलालेख, यन्त्रलेख और जनश्रुतियां आदि एकत्रित करना आवश्यक है। इन साधनों का संग्रह होने पर ही तीर्थों का का इतिहास लिखना सुगम होगा। प्रस्तुत पुस्तक में साधारणत: ऐतिहासिक उल्लेख किए हैं। संक्षेप में विद्यार्थी इसे पढ़कर प्रत्येक तीर्थका ज्ञान पा लेगा और भक्त अपनी आत्म-संतुष्टि कर सकेगा। यह लिखी भी इसी दृष्टि से गई है।

भा० दि० जैन परिषद् परीक्षा बोर्ड के लिए तीर्थ विषयक एक पुस्तक की आवश्यकता थी। मेरे प्रिय मित्र ला० उग्रसेन जी ने, जो परिषद् परीक्षा बोर्ड के सुयोग्य मन्त्री हैं यह प्रेरणा की कि मैं इस पुस्तक को परिषद् परीक्षा बोर्ड कोर्स के लिए लिख दूं। उनकी प्रेरणा का ही यह परिणाम है कि प्रस्तुत पुस्तक वर्तमान रूप में सन् १६४३ में लिखी जाकर प्रकाशित की गई थीं। अत: इसके लिखे जाने का श्रेय उन्हीं को प्राप्त है।

यह हर्ष का विषय है कि जन साधारण एवं छात्र वर्ग ने इस पुस्तक को उपयोगी पाया और इसका पहला दूसरा तीसरा संस्करण समाप्त हो गया। अब यह चौथा संस्करण है।

इसमें कई संशोधन और संवर्धन भी किए गए हैं। पाठक इसे और भी उपयोगी पायेंगे।

आशा है यह पुस्तक इच्छित उद्देश्य की पूर्ति करेगी।

श्रुत पंचमी 2472
अलीगंज (एटा)

विनीत
—कामताप्रसाद जैन

* अनुक्रम *

॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

जैन तीर्थ और उनकी यात्रा

१–तीर्थ क्या है ?

'तृ' धातु से 'थ' प्रत्यय सम्बद्ध होकर 'तीर्थ' शब्द बना है। इसका शब्दार्थ है –'जिसके द्वारा तरा जाय।' इस शब्दार्थ को ग्रहण करने से 'तीर्थ' शब्द के अनेक अर्थ हो जाते हैं, जैसे शास्त्र, उपाध्याय, उपाय, पुण्यकर्म, पवित्र स्थान इत्यादि। परन्तु लोक में इस शब्द का रूढ़ार्थ 'पवित्र स्थान' प्रचलित है। हमें भी यह अर्थ प्रकृतरूपेण अभीष्ट है, क्योंकि जैन तीर्थ से हमारा उद्देश्य उन पवित्र स्थानों से है, जिनको जैनी पूजते और मानते हैं।

साधारणतः क्षेत्र प्रायः एक समान होते हैं, परन्तु फिर भी उनमें द्रव्य, काल, भाव और भवरूप से अन्तर पड़ जाता है। यही कारण है कि इस युग के आदि में आर्य भूमि का जो क्षेत्र परमोन्नत दशा में था, वही आज हीन दशा में है। वैसे ही ऋतुओं के प्रभाव से व काल के परिवर्तन से क्षेत्र में अन्तर पड़ जाता है। हर कोई जानता है कि भारत में भिन्न-भिन्न प्रकार के क्षेत्र मिलते हैं। पंजाब का क्षेत्र अच्छा गेहूं उपजाता है, जबकि बंगाल का क्षेत्र अच्छे चावल को उत्पन्न करने के लिए प्रसिद्ध है। सारांशतः यह स्पष्ट है कि बाह्य ऋतु आदि निमित्तों को पाकर क्षेत्रों का प्रभाव विविध प्रकार के रूपों को धारण करता है।

संसार से विरक्त हुए महापुरुष प्रकृति के एकान्त और शांत स्थान में विचरते हैं। उच्च पर्वतमालाओं—मनोरम उपत्यकाओं, गम्भीर गुफाओं और गहन वनों में जाकर साधुजन साधना में लीन

होते हैं। जैन धर्म जीवमात्र को परमार्थ सिद्धि की
उपदेश देता है; क्योंकि प्रत्येक जीव सुख चाहता है।
के प्रलोभनों में नही है; वह आत्मा का गुण है। जो मनु
की छाया को पकड़ रखने का उद्योग करता है उसे ह
पड़ता है। छाया का पीछा करने से वह हाथ नहीं आ
प्रति उदासीन हो जाइए, वह स्वतः आपके पीछे-पी
अतएव जो मनुष्य महान् बनने के इच्छुक हैं उन्हें त्याग-
अभ्यास करना कार्यकारी है। अर्थ और काम पुरुषार्थो व
धर्म पुरुषार्थ पर ही निर्भर है इसलिए अन्य कार्यो के
वन्दना भी धर्माराधना में मुख्य कारण कहा गया है। व
वह विशेष स्थान है जहां पर किसी साधक ने साधना व
सिद्धि को प्राप्त किया है। वह स्वयं तारण-तरण हुआ
क्षेत्र को भी अपनी भव-तारण शक्ति से संस्कारित क
धर्म-मार्ग के महान् प्रयोग उस क्षेत्र में किये जाते हैं—
तिल-तुषमात्र परिग्रह का त्याग करके मोक्षपुरुषार्थ के स
हैं, वे वहां पर आसन माड़कर तपश्चरण, ज्ञान और
अभ्यास करते हैं, अन्त में कर्म-शत्रुओं का और द्वेषा
करके परमार्थ को प्राप्त करते हैं। यहीं से वह मुक्त हो
लिए ही निर्वाण-स्थान परम पूज्य हैं।+

+'कल्पान्निर्वाण कल्याग मन्वेत्यामरनायकाः।
गंधादिभिः समभ्यर्च्य तत्क्षेत्रमपवित्रयन् ॥६३॥ '

—उत्त

अर्थ :—निर्वाण कल्याण का उत्सव मनाने के लि
देव स्वर्ग से उसी समय आये और गंध अक्षत आदि
पूजा करके उन्होंने उसे पवित्र बनाया। अतः निर्वाण
पूज्य हैं।

किन्तु निर्वाण स्थान के साथ ही जैन धर्म में तीर्थङ्कर भगवान के गर्भ, जन्म, तप और ज्ञान कल्याणक के पवित्र स्थानों को भी तीर्थ कहा गया है वे भी पवित्र स्थान हैं। तीर्थङ्कर कर्मप्रकृति जैन कर्मसिद्धांत में एक सर्वोपरि पुण्य-प्रकृति कही गई है। जिस महानुभाव से यह पुण्यप्रकृति बंध को प्राप्त होती हैं अन्य सभी पुण्यप्रकृतियां उसकी अनुसारिणी हो जाती है। यही कारण है कि भावी तीर्थङ्कर के माता के गर्भ में आने के पहले ही वह पुण्य प्रकृति अपना सुखद प्रभाव प्रकट करती है। और गर्भ में आने से ६ माह पूर्व से और गर्भावस्था के नौ माह तक इस प्रकार कुल १५ महीने तक रत्न और स्वर्ण वृष्टि होती है। उनका गर्भावतरण और जन्म स्वयं माता-पिता एवं अन्य जनों के लिए सुखकारी होता है। उस पर जिस समय तीर्थङ्कर भगवान् तपस्वी बनने के लिए पुरुषार्थी होते हैं, उस समय के प्रभाव का चित्रण शब्दों में करना दुष्कर है। वह महान अनुष्ठान है – संसार में सर्वतोभद्र है। उस समय कर्मवीर से धर्मवीर ही नहीं बल्कि वह धर्म चक्रवर्ती की प्रतिज्ञा करते हैं। उनके द्वारा महान लोकोपकार होने का पुण्य योग इसी समय से घटित होता है। अब भला बताइये, उनका तपोवन क्यों न पतितपावन हो। उनके दर्शन करने से क्यों न धर्म मार्ग का पर्यटक बनने का उत्साह जागृत हो ?

उस पर केवल ज्ञान-कल्माण-महिमा की सीमा असीम है। इसी अवसर पर तीर्थङ्करत्व का पूर्ण प्रकाश होता है। इसी समय तीर्थङ्कर भगवान को धर्म चक्रवर्तित्व प्राप्त होता है। वह ज्ञानपुञ्ज रूप सहस्र सूर्य प्रकाश को भी अपने दिव्य आत्मप्रकाश से लज्जित करते हैं। खास बात इस कल्याणक की है कि यही वह स्वर्ण घड़ी है जिसमें लोकोपकार के बहाने से तीर्थङ्कर भगवान द्वारा धर्म चक्रप्रवर्तन होता है। यही वह पुण्यस्थान हैं, जहां जीव मात्र को सुखकारी धर्मदेशना कर्णगोचर होती है। और यहीं से

एक स्वर्ण वेला में तीर्थङ्कर भगवान का विहार होता है, जिसके आगे आगे धर्म चक्र चलता है । सारे आर्य खड में सर्वज्ञ-सर्वदर्शी जिनेन्द्र प्रभु का विहार और धर्मोपदेश होता है। अत: आयुकर्म के निकट अवसान में वह जीवनमुक्त परमात्मा किसी पुण्य क्षेत्र पर आ विराजमान होते हैं और वहीं से लोकोत्तर ध्यान की साधना से अघातिया कर्मों का भी नाश करके अशरीरी परमात्मा हो जाते हैं। निर्वाण काल के समय उनके ज्ञानपुंज आत्मा का दिव्य प्रकाश लोक को आलोकित कर देता है और वह क्षेत्र ज्ञान किरण से संस्कारित हो जाता हैं। देवेन्द्र वहां आकर निर्वाण कल्याण की पूजा करता है और उस स्थान को अपने बज्र दण्ड से चिह्नित कर देता है। + भक्तजन ऐसे पवित्र स्थानों पर चरण चिन्ह स्थापित करके उपर्युक्त लिखित दिव्य घटनाओं की पुनित स्मृति स्थायी बना देते हैं। मुमुक्षु उनकी वन्दना करते हैं और उस आदर्श से शिक्षा ग्रहण करके अपना आत्मकल्याण करते हैं। *यह है तीर्थों का कल्याण-रहस्य।

किन्तु तीर्थङ्कर भगवान के कल्याणक स्थानों के अतिरिक्त सामान्य केवली महापुरुषों के निर्माण स्थान भी तीर्थवत् पूज्य हैं। वहां निरन्तर यात्रीगण आते जाते हैं, उस स्थान की विशेषता उन्हें वहां ले आती है। वह एक मात्र आत्म-साधना के चमत्कार की द्योतक होती है उस पवित्र क्षेत्र पर किसी पूज्य साधु ने उपसर्ग सहन कर अपने आत्मबल का चमत्कार प्रगट किया होगा अथवा वह स्थान अगणित आराधकों की धर्माराधना और सल्लेखनाव्रत की पालना से दिव्य रूप पा लेता है वहां पर अद्भुत और अतिशय पूर्ण दिव्य मूर्तियाँ और मन्दिर मुमुक्षु के हृदय पर ज्ञान-ध्यान की शांतिपूर्ण मुद्रा अंकित करने में कार्यकारी होते हैं।

+ हरिवंश पुराण व उत्तर पुराण देखो।

* पार्श्वनाथचरित्र (कलकत्ता) पृष्ठ ४२०।

जैन सिद्धांत साक्षात् धर्म विज्ञान है, उसमें अंधेरे में निशाना लगाने का उद्योग कहीं नहीं है। वह साक्षात् सर्वज्ञ-सर्वदर्शी तीर्थङ्कारों की देन हैं इसलिए उनमें पद-पद पर वैज्ञानिक निरूपण हुआ मिलता है। हर कोई जानता है जिसने किसी मनुष्य को देखा नहीं वह उसको पहचान नहीं सकता। मोक्ष मार्ग के पर्यटक का ध्येय परमात्म स्वरूप प्राप्त करना होता है। तीर्थङ्कर भगवान उस परमात्म स्वरूप के प्रत्यक्ष आदर्श जीवन्मुक्त परमात्मा होते हैं। अतएव उनके दर्शन करना एक मुमुक्षु के लिए उपादेय है, उनके दर्शन उसे परमात्म-दर्शन कराने में कारण भूत होते हैं। इस काल में उनके प्रत्यक्ष दर्शन सुलभ नहीं हैं। इस लिए ही उनकी तदाकार स्थापना करके मूर्तियों द्वारा उनके दर्शन किये जाते है। तीर्थ स्थानों में उनकी उस ध्यान मई शांतमुद्रा को धारण की हुई मूर्तियां भक्तजनों के हृदय में सुख और शांति की पुनीत धारा बहा देतीं हैं। भक्त हृदय उन मूर्तियोंके सन्मुख पहुंचते ही अपने आराध्य देव का साक्षात् अनुभव करता है और गुणानुवाद गा गाकर अलभ्य आत्मतुष्टि पाता है। पाठशाला में बच्चे भूगोल पढ़ते हैं। उन देशों का ज्ञान नक्शेके द्वारा कराया जाता है जिनको उन्होंने देखा नहीं है। उस अतदाकार स्थान अर्थात् नक्शे के द्वारा वह उन विदेशोंका ठीक ज्ञान उपार्जन करते है। ठीक इसी तरह जिनेन्द्र की प्रतिमा भी उनका परिज्ञान कराने में कारणभूत हैं। जिन्होंने महात्मा गांधी को नहीं देखा है, वे उनके चित्र अथवा मूर्ति के दर्शन करके ही उनका परिचय पाते और श्रद्धालु होते हैं। इसीलिए जिनमन्दिरों में जिन प्रतिमाएँ होती हैं। उनके आधार से एक गृहस्थ ज्ञान-मार्ग में आगे बढ़ता है। तीर्थ स्थानों पर भी इसी लिये अति मनोज्ञ और दर्शनीय मूर्तियों का निर्माण किया गया है

पहले तो तीर्थ स्थान स्वयं पवित्र हैं। उस पर वहां आत्म-संस्कारों को जागृत करने वाली बोलती सी जिन प्रतिमायें होती है। जिनके दर्शन से तीर्थयात्री को महती निराकुलता का अनुभव होता है।+ वह साक्षात सुखका अनुभव करता है। अब पाठक समझ सकते हैं कि तीर्थ क्या है।

+ 'सपरा जगम देहा दंसणणाणेण सुद्धचरणाणं।
णिग्गंथवीयराया जिणमग्गे एरिसा पडिमा ॥'

—षट्पाहुडे श्री कुन्दकुन्दाचार्य:

भावार्थ :—स्व आत्मा से भिन्न देह जो दर्शनज्ञान व निर्मल चारित्र से निर्ग्रन्थस्वरूप है और वीतराग है वह जंगम प्रतिमा जिन मार्ग में मान्य है। व्यवहार में वैसी ही प्रतिमा पाषाणादि की होती हैं।

प्रश्नावली

१. तीर्थ शब्द का क्या अर्थ है? साधारण बोलचाल में तीर्थ किसे कहते हैं? कुछ उदाहारण देकर समझाओ।
२. तीर्थ क्षेत्र कैसे बनते हैं?
३. 'सिद्धक्षेत्रों', या 'निर्वाण क्षेत्र' और अतिशय क्षेत्र' के बारे में संक्षेप में लिखो।
४. तीर्थक्षेत्रों पर तीर्थंकरों अथवा महापुरुषों की मूर्तियां या उनके चरण चिन्ह क्यों बनाये जाते हैं? उनका क्या उपयोग है?

तीर्थ स्थान का महत्व और उसकी विनय

'सिद्धक्षेत्रे महातीर्थे पुराणपुरुषाश्रिते।
कल्याणकलिते पुण्ये ध्यान सिद्धि प्रजायते॥'

—ज्ञानार्णव।

'तीर्थ' शब्द ही उसके महत्व को बतलाने के लिए पर्याप्त है। तीर्थ वह स्थान है जिसके द्वारा संसार-सागर से तरा जाय। उसके समागम में पहुंच कर मुमुक्षु संसार-सागर से तरने का उद्योग करता है, क्योंकि तीर्थो का प्रभाव ही ऐसा है। वह योगियों की योगनिष्ठा ज्ञान-ध्यान और तपश्चरण से पवित्र किये जा चुके हैं। उनमें भी निर्वाणक्षेत्र महातीर्थ है, क्योंकि वहां से बड़े-बड़े प्रसिद्ध पुरुष ध्यान करके सिद्ध हुए हैं। पुराणपुरुष अर्थात् तीर्थंकर आदि महापुरुषों ने जिन स्थानो का आश्रय लिया हो अथवा ऐसे महातीर्थ जो तीर्थंकरों के कल्याणक स्थान हों, उनमें ध्यान की सिद्धि विशेष होती है। ध्यान ही वह अमोघ बाण है जो पापशत्रु को छिन्न भिन्न कर देता है। मुमुक्षु पाप से भयभीत होता है। पाप में पीड़ा है और पीड़ा से सब डरते हैं। इस पीड़ा से बचने के लिए भव्यजीव तीर्थक्षेत्रों की शरण लेते हैं। जन-साधारण को यह विश्वास है कि तीर्थ स्थान की वन्दना करने से उनका पाप मैल धुल जाता है। लोगों का यह श्रद्धान सार्थक है, परन्तु यह विवेक सहित होना चाहिये, क्योंकि जब तक तीर्थ के स्वरूप, उसके महत्व और उसकी वास्तविक विनय करने का रहस्य नहीं समझा जायगा, तब तक केवल तीर्थ दर्शन कर लेना पर्याप्त नहीं है। लोक में सागर, पर्वत, नदी आदि को तीर्थ मानकर उसमें स्नान

कर लेने मात्र से ही बहुधा पवित्र हुआ माना जाता है, किन्तु यह धारणा गलत है। बाहरी शरीर-मल के धुलने से आत्मा पवित्र नहीं होती है। आत्मा तब ही पवित्र होती है जबकि क्रोधादि अन्त मल दूर हों। अतएव तीर्थ वही कहा जा सकता है और वही तीर्थ वन्दना हो सकती है, जिसकी निकटता में पाप-मल दूर होकर अन्त रंग शुद्ध हो। जिन मार्गमें वही तीर्थ बन्दना है, जिसके दर्शन और पूजन करने से पवित्र उत्तम क्षमादि धर्म, विशुद्ध सम्यग्दर्शन, निर्मल संयम और यथार्थ ज्ञानकी प्राप्ति हो, जहां से मनुष्य शान्तिभाव का पाठ उत्तम रीति से ग्रहण कर सकता है, वह ही तीर्थ है। जैन मत के माननीय तीर्थ उन महापुरुषों के पतित पावन स्मारक हैं जिन्होंने आत्म शुद्धि की पूर्णता प्राप्त की हैं। लौकिक शुद्धि विशेष कार्यकारी नहीं हैं। साबुन लगाकर, मलमल कर नहाने से शरीर भले ही शुद्धसा दीखने लगे, परन्तु लोकोत्तर शुचिता उससे प्राप्त नहीं हो सकती। लोकोत्तर शुचिता तब ही प्राप्त हो सकती है, जब अन्तरङ्ग से क्रोधादि कषाय मैल धो दिया जाय। इसको धोने के लिए धर्म उपादेय है। सम्यग्-दर्शन, सम्यग्-ज्ञान और सम्यक-चारित्र-रूप रत्नत्रय धर्म की आराधना ही लोकोत्तर सुचिता की आधार शिला है। इस रत्नत्रय-धर्म के धारक साधुजनों के आधार रूप निर्वाण आदि तीर्थ स्थान हैं। वह तीर्थ ही इस कारण लोकोत्तर शुचित्व के योग्य उपाय हैं, प्रबल निमित्त हैं। + इसी लिए शास्त्रों में तीर्थों की गणना मंगलों में की गई है। वह क्षेत्र मंगल है। कैलाश, सम्मेदाचल, ऊर्जयंत (गिरिनार),

+ 'तत्रात्मनोविशुद्धध्यानजलप्रक्षालितकर्ममलकलंकस्य स्वात्मन्यवस्थानं लोकोत्तरशुचित्वं तत्साधनानि सम्यग्दर्शनज्ञानचरित्रतपांसि तद्वन्तश्च साधवस्तधिष्ठानानि च निर्वाणभूम्यादिकानि तत्प्राप्त्यु पापत्वात् शुचिव्यपदेशमन्ति।'

—चारित्रसार पृ० १८०

पावापुर, चम्पापुर, आदि तीर्थ स्थान अर्हन्तादि के तप, केवल ज्ञानादि गुणों के उपजने के स्थान होने के कारण क्षेत्रमङ्गल हैं।+ एवं इन पवित्र क्षेत्रों का स्तवन और पूजन 'क्षेत्रस्तवन' है।*

तीर्थस्थल के दर्शन होते ही हृदय में पवित्र आह्लाद की लहर दौड़ती है, हृदय भक्ति से भर जाता है। यात्री उस पुण्यभूमि को देखते ही मस्तक नमा देता हैं, और अपने पथ को शोधता हुआ एवं उस तीर्थ की पवित्र प्रसिद्धि का गुणगान मधुर स्वर लहरी से करता हुआ आगे बढ़ता है। जिन मन्दिर में जाकर वह जिन दर्शन करता है और फिर सुविधानुसार अष्टद्रव्यों से जिनेन्द्र का और तीर्थका पूजन करता है।× तीनों समय सामायिक वन्दना करता है। शास्त्रस्वाध्याय और धर्मचर्चा करने में निरत रहता है। बार बार जाकर पर्वतादि क्षेत्र की वन्दना करता है और

+ 'क्षेत्रमंगलमूर्जयन्तादिकमर्हदादीनां
निष्क्रमण केवल ज्ञानादि गुणोत्पत्तिस्थानम्'

—श्रीगोमट्टसार पृ० २।

*'अर कैलाश, संमेदाचल, ऊर्जयन्त (गिरिनार), पावापुर, चम्पापुरादि निर्वाणक्षेत्रनिका तथा समवशरण में धर्मोपदेश के क्षेत्र का स्तवन सो क्षेत्र स्तवन है।'

श्रीरत्नकरण्ड श्रावकाचार (बम्बई) पृ० १६५।

× 'जिणजम्मणणिक्खावणे-णाणुप्पत्तीय तित्थ चिण्हे सु।
णिसिहीसु खेत्त पूजा, पुव्यविहाणेण कायव्वा ।।४५२।।'

अर्थ :—जिनभगवान की जन्मभूमि, दीक्षाभूमि, केवलज्ञान उत्पन्न होने की भूमि और तीर्थचिन्ह स्थान और निषधिका अर्थात् निर्वाण-भूमियों में पूर्वोक्त कल्याणक स्थानों में पूर्व कही हुई विधि के अनुसार (जल चन्दनादि से) पूजा करना चाहिए इसका नाम क्षेत्र पूजा है।

—वसुनन्दि श्रावकाचार पृ० १३०

चलते-चलते यही भावना करता हैं कि भव-भव में मुझे ऐसा ही पुण्य योग मिलता रहे। सारांश यह है कि यात्री अपना सारा समय धर्मपुरुषार्थ की साधना में ही लगाता है। वह तीर्थस्थान पर रहते हुए अपने मन में बुरी भावना उठने ही नहीं देता, जिससे वह कोई निन्दनीय कार्य कर सके। ऐसे पवित्र स्थान पर यात्रीगण ऐसी प्रतिज्ञाएँ बड़े हर्ष से लेते हैं जिनको अन्यत्र वे शायद ही स्वीकार करते। यह सब तीर्थ का महात्म्य है। ऐसे पवित्र स्थान को किसी भी तरह अपवित्र न बनाना ही उत्तम हैं। शौचादि क्रियाएँ भी बाह्य शुचिता का ध्यान रखकर करनी चाहिए, क्योंकि ध्यानादि धर्म क्रियाओं के साधन करने योग्य स्थान शान्तिमय एवं पवित्र ही होना चाहिए।+

प्रश्नावली

१] तीर्थ क्षेत्र का महत्व लिखो।

२] धार्मिक एवं आत्मा की उन्नति के लिए तीर्थ यात्रा क्यों आवश्यक है?

३] सच्ची तीर्थ यात्रा और तीर्थवन्दन किस प्रकार होती है ?

४] किस प्रकार की हुई तीर्थयात्रा निष्फल और पाप कर्मबन्ध का कारण होती है।

+ जनसंसर्ग वाक चित् परिस्पन्द मनो भ्रमा।
उत्तरोक्षर बीजानि ज्ञानिजन मतस्त्जेत् ॥ —ज्ञानार्णव

तीर्थ प्रबन्धकों को स्वयं ऐसा प्रबन्ध करना चाहिए जिससे बाहरी गंदगी न फैलने पावे। अधिक संख्या में शौचगृह बनाने चाहिये और उनकी सफाई के लिए एक से अधिक भंगी रखने चाहिये। उनमें फिनाइल डलवाकर रोज धुलवाना चाहिये।

तीर्थ यात्रा से लाभ
और
तीर्थों की रूपरेखा

तीर्थयात्रा क्यों करनी चाहिए ? इस प्रश्न का उत्तर देना अब अपेक्षित नहीं; क्योंकि जो महानुभाव तीर्थों के महत्व को जान लेगा, वह स्वयं इसका समाधान कर लेगा। यदि वह रत्नत्रयधर्म की आराधना करके, विशेष पुण्यबन्ध करना चाहता है, तो वह अवश्य ही तीर्थयात्रा करने के लिए उत्सुक होगा। घर बैठे ही कोई अपने धर्म के पवित्र स्थानों का महत्व और प्रभाव नहीं जान सकता। सारे भारत वर्ष में जैनतीर्थ बिखरे हुए हैं। उनके दर्शन करके ही एक जैनी धर्म-महिमा की मुहर अपने हृदय पर अंकित कर सकता है, जो उसके भावी जीवन को समुज्ज्वल बना देगी। यह तो हुआ धर्मलाभ, परन्तु इसके साथ ब्याजरूपी देशांटनादि के लाभ अलग ही होते है। देशाटन में बहुत सी नई बातों का अनुभव होता है और नई वस्तुओं के देखने का अवसर मिलता है। यात्री का वस्तुविज्ञान और अनुभव बढ़ता है और उसमें कार्य करने की चतुरता और क्षमता आती है। घर में पड़े रहने से बहुधा मनुष्य संकुचित विचारों का कूपमंडूक बना रहता है, परन्तु तीर्थयात्रा करने से हृदय से विचार-संकीर्णता दूर हो ज ती है, उसकी उदारवृत्ति होती है। वह आलस्य और प्रमाद का नाश करके साहसी बन जाता है। अपना और पराया भला करने के लिए वह तत्पर रहता है।

जैनी अपने पूर्वजोंके गौरवमयी अस्तित्व का परिचय प्राचीन स्थानों का दर्शन करके ही पा सकते हैं, जो कि तीर्थयात्रा में सुलभ है। साथ ही वर्तमान जैन समाज की उपयोगी संस्थाओं जैसे जैन कालिज, बोर्डिंग हाउस, महाविद्यालय, श्राविकाश्रम आदि के निरीक्षण करने का अवसर मिलता है। इस दिग्दर्शन से दर्शक

के हृदय में आत्म-गौरव की भावना जागृत होना स्वाभाविक है। वह अपने गौरव को जैन समाज का गौरव समझेगा और ऐसा उद्योग करेगा जिसमें धर्म और संघ की प्रभावना हो। तीर्थ यात्रा में उसे मुनि, आर्यिका आदि साधु पुरुषों के दर्शन और भक्ति करने का भी सौभाग्य प्राप्त होता है। अनेक स्थानों के सामाजिक रीति-रिवाजों और भाषाओं का ज्ञान भी पर्यटक को सुगमता से होता है। घर से बाहर रहने के कारण उसे घर-धन्धे की आकुलता से छुट्टी मिल जाती है। इसलिए यात्रा करते हुये भाव बहुत शुद्ध रहते हैं। विशाल जैन मंदिरों और भव्य प्रतिमाओं के दर्शन करने से बड़ा आनन्द आता है। अनेक शिलालेखों के पढ़ने से पूर्व इतिहास का परिज्ञान होता हैं। संक्षेप में यह कि तीर्थ यात्रा में मनुष्य को बहुत से लाभ होते हैं।

यात्रा करते समय मौसम का ध्यान रखकर ठण्डे और गरम कपड़े साथ ले जाने चाहिये; परन्तु वह जरूरत से ज्यादा नहीं रखने चाहिए। रास्ते में खाकी ट्विल की कमीजें अच्छी रहती हैं। खाने पीने का शुद्ध सामान घर से लेकर चलना चाहिये। उपरान्त खत्म होने पर किसी अच्छे स्थान पर वहां के प्रतिष्ठित जैनी भाई के द्वारा खरीद लेना चाहिये। रसोई वगैरह के लिए बर्तन परिमित ही रखना चाहिए और जोखम की कोई चीज या कीमती जेवर लेकर नहीं जाना चाहिये। आवश्यक औषधियां और पूजनादि की पोथियाँ अवश्य ले लेनी चाहिये। थोड़ा सामान रहने से यात्रा करने में सुविधा रहती है। यात्रा में और कौन-सी बातों का ध्यान रखना आवश्यक हैं, वह परिशिष्ट में बता दिया गया है। यात्रेच्छु उस उपयोगी शिक्षा से लाभ उठावें।

तीर्थयात्रा के लिए तीर्थो की रूपरेखा का मानचित्र प्रत्येक भक्तहृदय में अंकित रहना आवश्यक है। वह यात्रा करे या न करे, परन्तु वह यह जाने अवश्य कि कौनसे हमारे पूज्य तीर्थ-

स्थान हैं और वह कहां हैं ? तीर्थों का यह सामान्य परिचय उन
हृदय में पुण्यभावना का बीज बो देगा जो एक दिन अंकुरित होव
अपना फल दिखायेगा। मुमुक्षु अवश्य तीर्थवन्दना के लिए या
करने जायेगा। शुभ-संस्कार व्यर्थ नहीं जाता। अच्छा तो आ
पाठक! जैन तीर्थों की रूप-रेखा का दर्शन कीजिए। भारतके प्रत्ये
प्रान्तमें देखिए आपके कितने तीर्थ हैं।

पहले ही पंजाब प्रान्त में देखना आरम्भ कीजिए। यद्य
आज भी पंजाबमें जैनियों का सर्वथा अभाव नहीं है, परन्तु तो १
दिगम्बर जैनियों की संख्या अत्यल्प है। एक समय पंजाब औ
अफगानिस्तान तक दिगम्बर जैनियों का बाहुल्य था। + उन
अतिशय क्षेत्र कोट कांगड़ा, तक्षशिला आदि स्थानों में थे, × परं
आज वह पवित्र स्थान नामनिःशेष हैं। यह काल का महात्म्य है
लाहौर आदि जैनियों के केन्द्र स्थान थे। पंजाब के लुप्त तीर्थों क
पुनरुद्धार हो तो अच्छा है। सन् १९४७में भारत विभाजन के सम
पंजाब का पश्चिमी भाग पाकिस्तान में चला गया और पूर्वी भा
भारतवर्ष में रहा। कालान्तर में भारत स्थित पंजाब के दो भा
हो गये--पंजाब और हरयाणा।

+ चीन देश का यात्री ह्वेन्त्सांग ७ वीं शताब्दी में भारत आय
था। उसने पंजाब के सिंहपुर आदि स्थानों एवं अफगानिस्तान
दिगम्बर जैनों की पर्याप्त संख्या लिखी थी। देखो 'हुएन्सांग क
भारत भ्रमण' (प्रयाग) पृष्ठ ३७ व १४२

× कोटकांगड़ा में मुसलमानों के राज्यकालमें भी जैनों का अधिका
रहा और वह स्थान पवित्र माना जाता था। अभी हाल में इस
स्थान का परिचय श्री विश्वम्भरदास जी गार्गीय ने प्रगट किया है
जिससे स्पष्ट है कि वहां दि० जैन मन्दिर था। अब यह खंडहर हो
गया है और दि० जैन प्रतिमा को सेंदुर लगा कर पूजा जाता है।
क्या ही अच्छा हो यदि इसका जीर्णोद्धार किया जावे ?

रावलपिंडी जिलेमें कोटेरा नामक ग्रामके पास 'मूर्ति' नामक
पहाड़ी पर डा० स्टोन को प्राचीन जैन मन्दिर मिला था।

उत्तर प्रदेश का नाम पहले संयुक्त प्रान्त था जो गंगा-यमुना की उपत्यका धर्मभूमि हैं—आगरा और अवध के संयुक्त प्रान्त में ही प्राय: अधिकांश तीर्थङ्करों का जन्म हुआ है। एक समय यह प्रदेश धर्मायतनों से सुशोभित था। मौर्यकालीनएवं गुप्त कालीन जिनप्रतिमायें इस प्रान्तमें मथुरा,अहिच्छेत्र, संकिशा (फर्रुखाबाद) और कौशाम्बी से उपलब्ध हुई हैं। संकिशा, कापित्थ और कम्पिला एक समय एक ही नगरकेतीन भाग थे। संकिशाके विषयमें चीनी यात्री फाह्यानने लिखा है कि जैनी इसे अपना तीर्थ बताते थे, परन्तु बौद्धों ने उन्हें बाहर निकाल दिया था। संकिशा के निकट अघतिया टीले से गुप्त कालीन जिनप्रतिमायें प्राप्त हुई हैं। यह संभवत: तेरहवें तीर्थङ्कर विमलनाथ जी का केवलज्ञान स्थान है। संयुक्त प्रान्त में ऐसे भूले हुए तीर्थ कई हैं। कौशाम्बी, काकन्दी श्रावस्ती आदि तीर्थ आज भुला दिये गये हैं। इनका उद्धार होना आवश्यक है। प्रचलित तीर्थोंकी नामावली निम्न प्रकार है:—

नं०	प्राचीन नाम	प्रकार	वर्तमान नाम	रेलवे स्टेशन
१	मथुरा या मदुरा	निर्वाण क्षेत्र	मथुरा	मथुरा मध्य रेलवे की मेन लाइन
२	शौर्यपुर	सिद्ध क्षेत्र	शौरीपुर बटेश्वर	आगरा से ४२ मील
३	हस्तनापुर	कल्याणक क्षेत्र	हस्तिनापुर	मेरठ से २२ मील
४	अयोध्या	,,	अयोध्या	उत्तर रेलवे
५	अहिच्छेत्र	अतिशय	अहिक्षेत्र	आवंला

न०	प्राचीन नाम	प्रकार	वर्तमान नाम	रेलवे स्टेशन
६	प्रयाग	कल्याणक क्षेत्र	इलाहाबाद	इलाहाबाद उत्तर रेलवे
७	काम्पिल्य	,,	कम्पिला	कायमगंज उत्तर पूर्वी रेलवे
८	ककुभग्राम	,,	कहाऊँगांव (गोरखपुर)	गोरखपुर उत्तर पूर्वी रेलवे
९	कुरुग्राम	अतिशयक्षेत्र	कुरगमा	झाँसी मध्य रेलवे
१०	कौशाम्बी	कल्याणक क्षेत्र	कौशाम्बी	इलाहाबाद उत्तर रेलवे
११	काकन्दीनगर	,, ,,	खुखंदोजी (देवरिया)	नोनवार, उत्तर रेलवे
१२	चन्द्रावती	,, ,,	चन्द्रपुरी	बनारस या सारनाथ उत्तर रेलवे
१३	चंदाउर चन्दवाड	अतिशय क्षेत्र	चंदावर (फिरोजाबाद)	फिरोजाबाद उत्तर रेलवे
१४	चांदपुर	,,	चांदपुर	झाँसी मध्य रेलवे
१५	देवगढ़	,,	देवगढ़ (झांसी)	ललितपुर मध्य रेलवे
१६	पवाजी	,,	पवाजी ,,	तालबेहट ,,
१७	वाराणसी	कल्याणक क्षेत्र	बनारस	बनारस उत्तर रेलवे
१८	बालाबेठ	अतिशय क्षेत्र	बालाबेट	ललितपुर मध्य रेलवे
१९	रत्नपुर	कल्याणक क्षेत्र	रत्नपुरी (फैजाबाद)	सोहावल, उत्तर रेलवे

नं०	प्राचीन नाम	तीर्थ का प्रकार	वर्तमान नाम	कहां से आया जाता है
२०	सिंहपुर	कल्याणक क्षेत्र	सिंहपुरी	सारनाथ उत्तर रेलवे
२१	श्रमण	,,	सिरौन जी	जखौरा मध्य रेलवे

* मध्य प्रदेश *

महाराष्ट्र व मध्य प्रदेश जैनधर्म का मुख्य केन्द्र रहा हैं। इस प्रदेश में अनेक जिन मन्दिर व तीर्थ विद्यमान हैं। एक समय यहां जैनधर्म राजधर्म के रूपमें प्रचलित था। उज्जैन जैनियों का मुख्य केन्द्र था। वर्तमान तीर्थ निम्न प्रकार हैं।

१	द्रोणगिरि	सिद्धक्षेत्र	द्रोणगिरि सेंदपा (जिला नयागांव)	सागर-गनेशगंज मध्य रेलवे
२	नैनागिरि	,,	नैनागिरि रेसंदीगिरि (सागर)	,,
३	अचलपुर मेंढ़गिरि	,,	मुक्तागिरि (अमरवती)	अमरावती ,,
४	अन्तरीक्ष पार्श्वनाथ	अतिशय क्षेत्र	अंतरीक्ष सिरपुर	अकोला ,,
५	अहारजी	,,	अहार जी	ललितपुर ,,
६	कारंजाजी	,,	कारंजा (अमरावी)	मुर्तिजापुर ,,
७	कुण्डलपुर	,,	कुण्डलपुर (दमोह)	दमोह ,,
८	कौन्डिण्यपुर	,,	कुण्डनपुर (अमरावती)	आर्वी ,,

नं०	प्राचीन नाम	तीर्थ का प्रकार	वर्तनाम नाम व जिला	कहां से जाया जाता है
९	कोनी जी	अतिशय क्षेत्र	कोनी पाटन (जबलपुर)	जबलपुर मध्य रेलवे
१०	खजराहा	,,	खजराहा (छतरपुर)	सतना ,,
११	पपौरा	,,	पपौरा	ललितपुर ,,
१२	बहुरीबन्द	,,	बहुरीबन्द (जबलपुर)	सिहौरा ,,
१३	बीना जी	,,	बीनाबारहा (सागर)	सागरयाकरेली ,,
१४	भातकुली	,,	बाबाजीमहाराज (अमरावती)	अमरावती ,,
१५	रामगिरि	,,	रामटेक (नागपुर)	रामटेक वाया नागपुर ,,
१६	चंदेरी	,,	चंदेरी (गुना)	ललितपुर ,,
१७	भमणगिरि	सिद्ध क्षेत्र	सोनागिर (दतिया)	सोनागिर ,,
१८	बड़बानी चूलगिरि	सिद्ध क्षेत्र	बड़वानी	महू पश्चिमी रेलवे
१९	पावागिरि	,,	ऊन इन्दौर	सनावद ,,
२०	सिद्धवरकूट	सिद्ध क्षेत्र	सिद्धवरकूट (इन्दौर)	मोरटक्का पश्चिमी रेलवे
२१	उज्जयनी	,,	उज्जैन	उज्जैन पश्चिमी रेलवे
२२	बंनेड़ा	,,	बनेडिया इन्दौर	अजनोद ,,

नं०	प्राचीन नाम	प्रकार	वर्तमान नाम	रेलवे स्टेशन
२३	विदिशा	अतिशय क्षेत्र	विदिशा	विदिशा मध्य रेलवे
२४	गोपाचल गिरि	,,	ग्वालियर	ग्वालियर ,,
२५	मकसीपार्श्वनाथ	,,	मक्सी जी (उज्जैन)	मक्सी ,,

राजस्थान

राजस्थान में भी जैनधर्म का प्राबल्य रहा है। यहीं अजमेर जिलांतर्गत बडली ग्राम से भ० महावीर के निर्वाण से ८४ वें वर्ष का शिलालेख उपलब्ध हुआ है। इस प्रांत में निम्नलिखित जैन तीर्थ हैं :—

१	अजमेर (नशियां)	अतिशयक्षेत्र	अजमेर	अजमेर पच्छिमी रेलवे
२	अर्बुदपर्वत	,,	आबू पहाड़ (सिरोही)	आबूरोड ,,
३	चमत्कार जी	,,	आलनपुर (जयपुर)	सवाई माधोपुर (पश्चिम रेलवे) से २ मील दूर
४	ऋषभदेव	,,	केशरियानाथ-धुलेव (उदयपुर)	उदयपुर पच्छिम रेलवे
५	चांदखेड़ी	,,	खानपुरचांदखेड़ी (कोटा)	झालावड़
६	श्री महावीर जी	,,	चांदनगांव (सवाईमाधोपुर)	श्री महावीरजी पश्चिमी रेलवे

नं०	[illegible] नाम	तीर्थ का प्रकार	वर्तमान नाम जिला	[illegible]हां से जाया जाता है
७	चंवलेश्वर	अतिशय क्षेत्र	चंवलेश्वर (शाहपुरा)	माँडल पश्चिमी रेलवे, अजमेर खंडवा लाइन पर
८	जयपुर	,,	जयपुर	जयपुर पश्चिमी रेलवे
९	तालनपुर	अतिशय क्षेत्र	तालनपुर कूकसी (इन्दौर)	बड़वानी पश्चिमी रेलवे
१०	झरकौन-जैगर	,,	बजरंगगढ़ (गुना)	गुना ,,
११	बीजोलिया पार्श्वनाथ	,,	बीजोल्यां (भील वाड़ा)	भीलवाड़ा ,,

बंगाल, बिहार और उड़ीसा

भारत के पूर्वीय भाग अर्थात् बंगाल-बिहार और उड़ीसा प्रान्तों में जैन धर्म प्राचीन काल से प्रचलित रहा है। वहां जैन मूर्तियां और भग्नावशेष हर स्थान पर भरतक्षेत्रका सबसे बड़ा तीर्थ श्री सम्मेदशिखर जी भी इसी प्रदेश में है। इन प्रान्तों के की नामावली निम्न प्रकार हैं :--

१	गुणावा	सिद्धक्षेत्र	नवादा	नवादा पूर्वी रेलवे
२	चम्पापुर-मंदारगिरि	,,	नाथनगर (भागलपुर)	भागलपुर पूर्वीय रेलवे
३	पाटलीपुत्र	,,	पटना	पटना ,,
४	पावापुर	,,	पावापुर (पटना)	बिहार ,,
५	राजगृह	,,	राजगिरि (पटना)	राजगिरि पूर्वीय रेलवे

नं०	प्राचीन नाम	तीर्थ का प्रकार	वर्तमान माम व जिला	कहां से जाया जाता है
६	सम्मेद शिखर	सिद्धक्षेत्र	सम्मेद शिखर (हजारीबाग)	पारसनाथ हिल पूर्वी रेलवे
७	कुमारी पर्वत	अतिशयक्षेत्र	खंडगिरि-उदयगिरि (उड़ीसा)	भुवनेश्वर पूर्वीय रेलवे
८	श्रावक-पहाड़	,,	श्रावक (गया)	गया-रफीगंज ,,
९	कुण्डलपुर (?)	,,	बड़गांव (पटना)	बड़गांव रोड़ ,,
१०	कुलहा पर्वत	,,	कुलहा (गया)	गया पूर्वीय रेलवे
११	आरा	,,	आरा (बिहार)	आरा ,,

महाराष्ट्र, गुजरात और कर्णाटक

महाराष्ट्र, गुजरात और कर्णाटक देश जैनधर्म का उन्नतशील प्राङ्गण रहा है। राष्ट्रकूट और चालुक्य वंश के राजाओं के समय में इस प्रदेश में जैनधर्म की विजय दुँदुभि बजती थी। वैसे अतीव प्राचीन कालसे जैन धर्म इन प्रान्तों में प्रचलित रहा है। दिगम्बर जैन सिद्धान्त का लिपिबद्ध अवतरण भी इसी प्रान्तार्गत हुआ हैं। इन प्रान्तों के तीर्थों की नामावली निम्न प्रकार है।

नं०	प्राचीन नाम	प्रकार	वर्तमान नाम	रेलवे स्टेशन
१	कुंथलगिरि	सिद्धक्षेत्र	कुंथलगिरि (उस्मानाबाद)	वार्शी टाउन मध्य रेलवे
२	गजपंथागिरि	,,	गजपंथा (नासिक)	नासिक ,,

नं०	प्राचीन नाम	प्रकार	वर्तमान नाम	रेलवे स्टेशन
३	गिरिनार ऊर्जयन्त	सिद्ध क्षेत्र	गिरिनार (जूनागढ़)	जूनागढ़ पश्चिम रेलवे
४	तारवरनगर	,,	तारंगा (महीकांठा)	तारंगाहिल ,,
५	पावागिरि	,,	पावागढ़ (पंचमहाल)	पावागढ़ चांपानेर रोड़ ,,
६	तुंगीगिरि	,,	मांगीतुंगी (नासिक)	मनमाड़ मध्य रेलवे
७	शत्रुंजय	,,	शत्रुंजय (पालीताना)	पालीताना, पश्चिमी रेलवे
८	अजंता गुफा मन्दिर	अतिशयक्षेत्र	अजंता (औरंगाबाद)	जलगाँव मध्य रेलवे
९	आरटाल	,,	आरटाल (धारवाड़)	हुवली दक्षिण रेलवे
१०	आष्टे	,,	आष्टे-विघ्नेश्वर-पार्श्वनाथ	दुधनी दक्षिण मध्य रेलवे
११	इलापुर	,,	इलौरा	मनमाड मध्य रेलवे
१२	ईडर	,,	ईडर	ईडर पश्चिम रेलवे
१३	उखलद (?)	,,	उखलद	पिंगली मध्य रेलवे
१४	कचनेर	,,	कचनेर	औरंगाबाद (पूनामनमाड) ,,
१५	कुण्डल श्रीक्षेत्र	,,	श्रीक्षेत्र	कुण्डल, दक्षिण रेलवे
१६	कुम्भोज	,,	कुम्भोज (कोल्हापुर)	हातकालंगड़ा दक्षिणमध्य रेलवे
१७	कुलपाक क्षेत्र	,,	कुलपाक	अलेर दक्षिण रेलवे

नं०	प्राचीन नाम	तीर्थ का प्रकार	वर्तमान नाम व जिला	कहां से आया जाता है
१९	भट्टाकलंकपुर	अतिशयक्षेत्र	भाटकला (होनावर)	होनावर दक्षिण रेलवे
२०	तेरपुर	,,	तेर (उस्मानाबाद)	तडवल दक्षिण म० रेलवे
२१	दही गांव	,,	दही गांव (शोलापुर)	डिक्सल ,,
२२	बाराशिवगुफा	,,	बाराशिव (उस्मानाबाद)	येडशी दक्षिण रेलवे
२३	बादामी (बातापी गुफामंदिर)	,,	बादामी (बीजापुर)	दक्षिण मध्य रेलवे हुबली शोलापुर छोटी लाइन
२४	बाबानगर	,,	बाबानगर (बीजापुर)	बीजापुर द० म० रेलवे
२५	बेलगांव	,,	बेलगांव	बेलगांव ,,
२६	विघ्नहर पार्श्वनाथ	,,	महुवा (सूरत)	सूरत पश्चिम रेलवे
२७	पार्श्वनाथ अमीझरा	,,	बड़ाली	ईडर रोड ,,
२८	होनसलगी क्षेत्र	,,	होनसलगी	सावली मध्य प्रदेश ,,
२९	कोपण	,,	कोपल	कोपल दक्षिण मध्य रेलवे
३०	स्तवननिधि	अतिशय क्षेत्र	स्तवननिधि	कोल्हापुर

नं०	प्राचीन नाम	तीर्थ का प्रकार	वर्तमाम नाम व जिला	कहाँ से जाया जाता हैं
३१	कारकल	,,	कारकल (दक्षिण कनाड़ा)	शिमोगा दक्षिण रेलवे
३२	मूडबिदुरी	,,	मूडबिदुरे (दक्षिण कन्नड़)	
३३	वारांग	,,	वारांग (,,)	
३४	विजयनगर	,,	विजयनगरम्	विजयनगरम् दक्षिण रेलवे हुबली शोलापुर
३५	वेणूर	,,	वेणूर	
३६	श्रवणवेलगोल	,,	जैनबद्री (हासन)	हासन दक्षिण रेलवे
३७	द्वारा समुद्र	,,	हलेबिड	हासन दक्षिण रेलवे

* मद्रास *

मद्रास प्रान्त [दक्षिण भारत] दिगम्बर जैनों का प्रमुख आवास रहा है। श्रुतकेवली-भद्रबाहू-स्वामी ने सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य को द्वादश-स्वप्नों का फल बताते हुए कहा था कि इस कलिकाल में दिगम्बर जैनधर्म दक्षिण प्रान्त में ही उन्नतशील रहेगा। वास्तव में हुआ भी ऐसा ही है। भद्रबाहु स्वामी के बहुत पहले से जैनधर्म इस प्रान्त में पहुंच चुका था। आदि तीर्थंकर ऋषभदेव का विहार यहां हुआ था और उनके पुत्र बाहुबलि जी का राज्य भी इस ओर रहा था। भगवान् नेमिनाथ जी के कल्याणकारी विहार का वर्णन 'हरिवंश पुराण' में मिलता है।

१८ [illegible] अतिशयक्षेत्र आटकला (हानावर) हानावर दक्षिण रेलवे

राजगण भी जैन धर्मानुयायी थे। मध्यकाल में कदम्ब, गंग, राष्ट्रकूट, पल्लव, होयसल आदि राजवंशों के राजा भी जैनधर्म के उपासक थे। उन्होंने जैनधर्म का महान् उत्कर्ष किया था। इस प्रान्त के तीर्थों की नामावली निम्न प्रकार है :—

नं०	प्राचीन नाम	तीर्थ का प्रकार	वर्तमान नाम व जिला	कहां से जाया जाता हैं
१	अर्प्याक्रम क्षेत्र	अतिशय क्षेत्र	अर्प्याक्रम (कांजीवरम्)	कांजीवरम् दक्षिण रेलवे
२	कांजीपुर	,,	कांजीवरम् (चेंगलपट्ट)	,,
३	तिरुमलय	,,	तिरुमलै (उत्तर अर्काट)	पोलर ,,
४	पुण्डी	,,	पुण्डी (,,)	आरनी रोड दक्षिण रेलवे की विल्लुपुरम्-नीगुंरेंठा लाइन
५	पेरुमण्डूर	अतिशयक्षेत्र	पेरुमण्डूर (उत्तर अर्काट)	तण्डिवनम् दक्षिण रेलवे
६	पोन्नूर	,,	पोन्नूर (चित्तोर)	तिण्डीवनम ,,
७	मेलापुर	,,	मद्रास	मद्रास ,,
८	मधुरा (मथुरा)	,,	मदुरा	मदुरा ,,
९	मनारगुडी	,,	मनारगुडी (तंजोर)	निडमंडलम् ,,
१०	श्रीक्षेत्र सितामूर	,,	चित्तम्बद	तिण्डिवनन्

इस प्रकार सारे भारत वर्ष में लगभग सवा-सौ दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र हैं। उनकी यात्रा वंदना करके मुमुक्षु अपनी आत्मा का हित साध सकते हैं।

प्रश्नावली

१] तीर्थ यात्रा के लाभ विस्तार से लिखो।

२] सामाजिक उन्नति करने और स्वदेश का गौरव बढ़ाने में तीर्थ यात्रा किस प्रकार सहायता करती है ?

३] भारत वर्ष और जैनधर्म के इतिहास को क्या-क्या सामग्री जैन तीर्थों से उपलब्ध होती हैं।

४[उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बंगाल, बिहार में से किसी एक प्रान्त के मुख्य तीर्थों के नाम लिखो ?

तीर्थों का सामान्य परिचय और यात्रा

वही जिह्वा पवित्र हैं, जिससे जिनेन्द्र का नाम लिया जावे और पगों को पाने की सार्थकता तभी है जब पुण्यशाली तीर्थों की यात्रा-वन्दना की जावे। आइये पाठक, हम लोग दिल्ली से अपनी परोक्ष तीर्थ यात्रा प्रारम्भ करें और मार्ग के दर्शनीय स्थानों का परिचय प्राप्त करें।

दिल्ली

दिल्ली भारत की राजधानी आज नहीं बहुत पुराने जमाने से है। पाण्डवों के जमाने में वह इन्द्रप्रस्थ कहलाती थी। इसका नाम योगिनीपुर भी रहा। सम्राट समुद्रगुप्त ने लोहे की एक लाट इन्द्र प्रस्थ में गढ़वाई थी। तोमर वंशी राजा अनंगपाल ने वह लाट पुनः मजबूत गढ़वाने के विचार से उखड़वाई क्योंकि किसी ज्योतिषी ने उससे कहा था कि यह लाट जितनी स्थिर होगी, उतना आपका राज्य स्थिर होगा। उखड़वाने पर देखा कि उसके किनारे पर खून लगा है। राजा ने लोहे की वह किल्ली पुनः गढ़वादी। किन्तु वह कीली कुछ ढीली रह गई। जिससे लोग उसे ढीली या ढिल्ली कहने लगे। ढिल्ली ही बदलते बदलते दिल्ली बन गई। शाहजहाँ ने उसका नाम शाहजहानाबाद रक्खा। बोलचाल में सब लोग उसे दिल्ली कहते है। जैनधर्म का उससे घनिष्ट सम्बन्ध रहा है।

कुतुब की लाट के पास पड़े हुए जैन मन्दिर और मूर्तियों के खण्डहर उसके प्राचीन सम्बन्ध की साक्षी दे रहे है। कुतुबुद्दीन ने २७ हिन्दू और जैन मन्दिरो को तोड़ कर यहां मसजिद बनाई थी। इसके खंभों और छतों में अब भी जैन मूर्तियाँ दीख पड़ती हैं। मुसलमान बादशाहो के जमाने में भी जैन धर्म दिल्ली में उन्नति-

शील हुआ। फीरोजशाह, अकबर आदि बादशाहों को जैन गुरुओं ने अहिंसा का उपदेश दिया और उनसे सम्मान पाया। मुस्लिम कालके बने हुए लाल मन्दिर, धर्मपुरा का नया मंदिर आदि दिव्य जैन मन्दिर दर्शनीय हैं। कुतुब की लाट, जन्तर-मन्तर, राष्ट्रपति भवन, लोकसत्ता भवन, राष्ट्रीय संग्रहालय आदि योग्य स्थान हैं। यहाँ से मेरठ पहुंचे।

हस्तिनापुर (मेरठ)

मेरठ उत्तरीय रेलवे का मुख्य स्टेशन है। जैनों की काफी संख्या है—कई दर्शनीय जिन मन्दिर हैं। मेरठ के मवाना मोटर अड्डे से २२ मील जाकर हस्तिनापुर के दर्शन करना चाहिए। यह तीर्थ वह स्थान है जहाँ इस युग के आदि में दानतीर्थ का अवतरण हुआ था—आदि तीर्थङ्कर ऋषभदेव को इक्षुरस का आहार देकर राजा श्रेयाँस ने दानकी प्रथा चलाई थी। उपरान्त यहां श्री शाँति नाथ, कुन्थुनाथ और अरहनाथ नामक तीन तीर्थङ्करों के गर्भ, जन्म, तप और ज्ञान कल्याणक हुए थे। इन तीर्थंकरों ने छः खण्ड पृथ्वी की दिग्विजय करके राजचक्रवर्ती की विभूति पाई थी किन्तु उसको तृणवत् त्याग कर वह धर्म चक्रवर्ती हुए। यही इस तीर्थ का महत्व है कि वह त्याग धर्म की शिक्षा देता है। श्री मल्लि नाथ भगवान् का समवशरण भी यहाँ आया था। बलि आदि मंत्रियों ने राज्य पाकर अंकचनाचार्य और उनके ७०० मुनियों पर यहीं 'उपसर्ग किया था।' जिसे विष्णुकुमार मुनि ने वामन रूप धारण कर दूर किया। तभी से रक्षा बन्धन पर्व प्रारम्भ हुआ। कौरव पाण्डव यहीं हुए थे। दिल्ली के राजा हरसुखराय जी, जो शाही खजांची और धर्मात्मा थे उनका बनवाया हुआ एक बहुत बड़ा रमणीक दि० जैन मंदिर और धर्मशाला है। तीनों भगवानोंकी प्राचीन नशियाँ भी हैं जिनमें चरण-चिह्न विराजमान हैं। यहाँ कार्तिक अष्टाह्निका पर्व पर मेला और उत्सव होता है। इसके अलावा फाल्गुनी अष्टान्हिका और ज्येष्ठ कृष्णा १४ को भी

मेले होते हैं। यहां ही पास में वसूमा नामक ग्राम में भी दर्शनीय और प्राचीन प्रतिबिम्ब हैं। यहाँ एक श्वेताम्बर मन्दिर भी है। यहाँ से वापस मेरठ आकर और हापुड़-मुरादाबाद जङ्कशन होते हुए अहिक्षेत्र पार्श्वनाथ के दर्शन करने जावें, आँवला स्टेशन आगरा बरेली पैंसिज्जर से उतरें और वहाँ से ताँगे द्वारा अहिक्षेत्र रामनगर जावें।

श्री अहिक्षेत्र

जिला बरेली के गाँव रामनगर में अहिक्षेत्र वह प्राचीन स्थान है जहाँ भ० पार्श्वनाथ का शुभागमन हुआ था। जब भगवान तत्कालीन "नागवन" के नाम से प्रसिद्ध स्थान में ध्यानमग्न थे और जब कमठ के जीव संवर नामक ज्योतिषी देव ने उन पर रोमांचकारी घोर उपसर्ग किया था, तब पद्मावती और धरणेन्द्र आये, धरणेन्द्र ने भगवान् को अपने सिर पर फण मंडप बनाकर उठा लिया और पद्मावती ने "नागफण मंडलरूप" छत्र लगाकर अपनी कृतज्ञता प्रकट की थी, इस घटना के कारण ही सौधर्मेन्द्र ने उस नागवन का नाम अहिक्षेत्र प्रकट किया। वहीं जैनधर्म का केन्द्र बन गया। यहाँ जैनी राजाओं का राज्य रहा है। राजा वसुपाल ने यहाँ एक सुन्दर सहस्र कूट जिन मंदिर निर्माण कराया था जिस में कसौटी के पाषाण की नौ हाथ उन्नत लेपदार प्रतिमा भ० पार्श्वनाथ को विराजमान की थी। आचार्य पात्र केशरी ने यहाँ पद्मावती देवी द्वारा फण मंडप पर लिखित अनुमान के लक्षण से अपनी शंका निवारण कर जैनधर्म की दीक्षा ली थी। यह आचार्य राजा अवनिपाल के समय में हुए थे और राजा ने भी प्रभावित होकर जैनधर्म धारण कर लिया था। चूँकि यह स्थान भ० पार्श्वनाथ के बहुत पहले से जैन संस्कृति का महान केन्द्र था, इस लिए वह भगवान् यहां पधारे थे। जिस समय गिरिनार पर्वत पर भ० नेमिनाथ का निर्वाण कल्याणक मनाया गया था, उसी समय

यहाँ के राजा ने भी निर्वाणोत्सव मनाया था। श्री अहिक्षेत्र जी के दर्शन यात्रियों को कृतज्ञता ज्ञापन और सत्य के पक्षपाती बनने की शिक्षा देते हैं। यहाँ तिखाल वाले बाबा (भ० पार्श्वनाथ) का बड़ा चमत्कार है। लोग वहां मनौती मनाने जाते हैं और उनकी कामनायें पूरी होती हैं। यहां पर कोट के खण्डहरों की खुदाई हुई है, जिनमें ईस्वीं प्रथम शताब्दी की जिन प्रतिमायें निकली हैं। यहाँ पर रामनगर गांव में एक विशाल दि० जैन मंदिर है और गांव के अत्यन्त निकट एक विशाल प्राचीन मन्दिर है जिसमें छः वेदियों में भगवान् विराजमान हैं। प्राचीन मूर्तियाँ चमत्कारी और प्रभाव शाली है तथा धर्मशालायें हैं। प्रति वर्ष चैत बदी अष्टमीसे त्रयोदशी तक मेला होता है। और आषाढ़ी अष्टाह्निका पर्व में प्रति वर्ष आस-पास के यात्री गण आकर श्री सिद्धिचक्र विधान करते हैं यह भी एक मेले का लघुरुप बन जाता है।

मथुरा

रेवती बहोड़ा खेड़ा से अलीगढ़-हाथरस जङ्क्शन होते हुए सिद्धक्षेत्र मथुरा आवे। यह महान तीर्थ है। अन्तिम केवली श्री जम्बूस्वामी संघ सहित यहाँ पधारे थे। उनके साथ महामुनि विद्युच्चर और पाँच सौ मुनिगण भी बाहर उद्यान में ध्यान लगाकर बैठे थे। किसी धर्मद्रोही ने उन पर उपसर्ग किया, जिसे सम-भाव से सहकर वे महामुनि स्वर्ग पधारे। उन मुनिराजों के स्मारक रूप यहां पांच सौ स्तूप बने हुए थे। सम्राट अकबर के समय अलीगढ़ वासी साहुटोडर ने उनका जीर्णोद्धार किया था। समय व्यतीत होने पर वे नष्ट हो गए। वहीं पर एक स्तूप भ० पार्श्वनाथ के समय का बना हुआ था, जिसे 'देवनिर्मित' कहते थे। श्री सोमदेवसूरि ने उनका उल्लेख अपने 'यशस्तिलकचम्पू' में किया है। आजकल चौरासी नामक स्थान पर दि० जैनियों का सुदृढ़ मंदिर है जिसे सेठ मनीराम ने बनवाया था। वहां पर 'ऋषभ ब्रह्मचर्याश्रम, 'श्री दि०

जैन रथ निकलवा कर धर्मप्रभावना की थी। भ० महावीर का समवशरण भी यहाँ आया था। किन्तु कम्पिल में इस समय एक भी जैनी नही है। परन्तु यहाँ प्राचीन विशाल दि० जैन मन्दिर दर्शनीय हैं, जिसमें विमलनाथ भ० की तीन महामनोज्ञ प्रतिमाएँ विराजमान हैं। एक बड़ी धर्मशाला भी है। चैत्र कृष्णा अमावस्या से चैत्र शुक्ला तृतीया तक और आश्विन कृष्णा २ को मेला होता है। यहाँ से वापस कायमगंज आकर कानपुर सेंट्रल स्टेशन का टिकट लेना चाहिए। कम्पिल में चहुंओर खण्डित जिनप्रतिमायें बिखरी पड़ी हैं, जिनसे प्रकट होता है कि यहाँ पहले और भी मन्दिर थे। वर्तमान बड़े मन्दिर जी में पहले जमीन में नीचे एक कोठरीमें भ० विमलनाथ के चरण चिन्ह थे, परन्तु अब वह कोठरी बन्द कर दी गई है और चरण पादुका बाहर विराजमान की गई है विमलनाथ भ० की मूर्ति अतिशयपूर्ण है।

कानपुर

कानपुर कारखानों और व्यापार का मुख्य केन्द है। यहां कई दर्शनीय जिनमंदिर हैं। और पंचायती बड़े मन्दिर जी में अच्छा शास्त्र भण्डार भी है। यहां से इलाहाबाद जाना चाहिए।

इलाहाबाद (पफोसा जी)

इलाहाबाद, गंगा-यमुना और सरस्वती के संगम पर बसा हुआ बड़ा नगर है। यही प्राचीन प्रयाग है। यहां किले के अन्दर एक अक्षय वट वृक्ष हैं। कहते हैं कि तीर्थङ्कर ऋषभदेव ने उसी के नीचे तप धारण किया था और यहीं उन्हे केवल ज्ञान हुआ था। इसी से यह अक्षयवट कहलाता है। यहाँ चार शिखरबन्द दि० जैन मंदिर हैं और मुहल्ला चाहचद में जैन धर्मशाला है। मंदिरों की बनावट मनोहर है और प्रतिमाएँ भी प्राचीन हैं। इस युग की यह आदि तपोभूमि है और प्रत्येक यात्री को धर्मवीर बनने का सन्देश सुनाती है। विश्वविद्यालय, हाई कोर्ट, किला, संगम आदि

स्थान दर्शनीय है। हिन्दुओं का भी यह महान तीर्थ हैं। इलाहाबाद से कौशाम्बी और पफोसा जी के दर्शन करने जाया जाता है। यह पद्मप्रभु भ० से सम्बन्धित तीर्थ है प्रभासक्षेत्र नामक पहाड़ पर एक प्राचीन जिन-मन्दिर हैं।

कौशाम्बी (कोसम)

प्राचीन कौशाम्बी नगर इलाहाबाद से २५ मील है। यहां तक बस जाती है। कौशाम्बी से नाव द्वारा पफोसा ६ मील पड़ता है। कौशाम्बी में पद्मप्रभु भ० के गर्भ-जन्म तथा पफोसा में तप और ज्ञान कल्याणक हुये थे। यहां का ऊदायन राजा प्रसिद्ध था, जिसके समय में यहां जैनधर्म उन्नति शील था। कोसम की खुदाई में प्राचीन जैन मूर्तियां मिली हैं। यहाँ से वापस इलाहाबाद पहुंच कर लखनऊ जावे।

लखनऊ

लखनऊ का प्राचीन नाम लक्ष्मणपुर है। स्टेशन के पास श्री मुन्नालाल जी कागजी की धर्मशाला है। यहां कुल ६ मन्दिर हैं, जिनके दर्शन करना चाहिए। यहां कई स्थान देखने योग्य हैं। कैसर बाग में प्रांतीय म्यूजियम में कई सौ दिगम्बर जैन मूर्तियां हैं। जैन मूर्तियों का ऐसा संग्रह शायद ही अन्यत्र कहीं हो। लखनऊ से फैजाबाद जावे। यहां से ४ मील बस, रिक्शा या तांगे में अयोध्या जावें।

अयोध्या

अयोध्या जैनियों का आदि नगर और आदि तीर्थ है। यहीं पर आदि तीर्थङ्कर ऋषभदेव जी के गर्भ व जन्म कल्याणक हुये थे। यहीं पर उन्होंने कर्मभूमि की आदि में सभ्य और सुसंस्कृत जीवन बिताना सिखाया था—मनुष्यों को कर्मवीर बनने का पाठ सबसे पहले यहीं पढ़ाया गया था। राजत्व की पुण्य प्रतिष्ठा भी

सबसे पहले यहीं हुई थी। तात्पर्य यह है कि धर्म–कर्म का पुण्यमयी लीलाक्षेत्र अयोध्या ही है। इस पुनीत तीर्थ के दर्शन करने से मनुष्य में कर्म वीरता का संचार और त्याग वीरता का भाव जागृत होना चाहिए। केवल ऋषदेव ही नही बल्कि द्वितीय तीर्थङ्कर श्री अजीतनाथ, चौथे तीर्थंकर श्री अभिनन्दननाथ, पाँचवे तीर्थंकर श्री सुमतिनाथ जी और १४ वें तीर्थंकर श्री अनन्तनाथ जीं का जन्म भी यहीं हुआ था। जिन्होंने महान राज ऐश्वर्य को त्याग कर मुनिपद धारण करके जीवों का उपकार किया था। यह सुन्दर तीर्थ अयोध्या सरयू नदी के किनारे बसा हुआ है। मु० कटरा में एक जैन मन्दिर और धर्मशाला है। मुहल्ला रामगंज़ में बिशाल मूर्ति हैं। यह विशाल मन्दिर सन् १९६५ में बना है। एक विशाल धर्मशाला है। पांच दिगम्बर जैन टोंके हैं, चरणचिन्ह प्राचीन काल के हैं। प्राचीन मन्दिर शाहबुद्दीन के समय में नष्ट किये जा चुके हैं। वर्तमान मन्दिर संवत् १७८१ में नबाब सुजाउद्दौला के राज्यकाल के बने हुए हैं। यह पाँचों टोंके क्रमश: मुहल्ला कटरा से प्रारम्भ करके सरयू नदी, कटरा स्कूल, बेगमपुरा और बक्सरिया टोले में हैं।

रत्नपुरी

रत्नपुरी यह पवित्र स्थान है जहां १५वें तीर्थकर श्री धर्मनाथ जी का जन्म हुआ था। वहाँ फैजाबाद से जाया जाता है। दो दिगम्बर मन्दिर हैं। वहां के दर्शन करके फैजाबाद से बनारस जाना चाहिये।

त्रिलोकपुर

त्रिलोकपुर अतिशयक्षेत्र बाराबंकी जिले में बिन्दौरा स्टेशन से तीन मील दूर है। मार्ग कच्चा है। यहां तीर्थंकर भ० नेमिनाथ की २२ इंची श्यामवर्ण पाषाण की बड़ी मनोज्ञ पद्मासन प्रतिमा विराजमान है। वह सं० ११९७ की प्रतिष्ठित है और चमत्कार

लिए हुए है। दूसरा पार्श्वनाथ का मन्दिर है। यहां कार्तिक शुक्ला ६ को वार्षिक मेला होता है।

बनारस

बनारस का प्राचीन नाम वाराणसी है और वह प्राचीन काशी देश की राजधानी रही है। यह जैन धर्म का प्राचीन केन्द्र है। सातवें तीर्थङ्कर श्री सुपार्श्वनाथ और तेईसवे तीर्थङ्कर श्री पार्श्व नाथ जी का लोकोपकारी जन्म यहीं हुआ था। भदैनी में सुपार्श्व नाथ और भेलूपुर में पार्श्वनाथ तीर्थकर के जन्म स्थान हैं। और वहां दर्शनीय मन्दिर बने हुये हैं। भेलूपुर में दिगम्बर और श्वेताम्बरों का सम्मिलित मन्दिर हैं तथा दो दिगम्बर मन्दिर हैं। इनके अतिरिक्त बूलानाले पर एक पंचायती मन्दिर और अन्यत्र तीन चैत्यालय हैं। जौहरी जी के चैत्यालय में हीरा की एक प्रतिमा दर्शनीय है। मैदागिन में भी विशाल धर्मशाला और मन्दिर है। भदैनी पर श्री स्याद्वाद महाविद्यालय दि० जैनियों का प्रमुख शिक्षा केन्द्र है। जिसमें उच्चकोटि की संस्कृत और जैन सिद्धान्तों की शिक्षा दी जाती है। हिन्दू विश्व विद्यालय के समीप 'सन्मति निकेतन' नाम का स्थान है जहां एक जैन मन्दिर और छात्रावास है। वहाँ रहकर विद्यार्थी अध्ययन करते हैं। महाकवि वृन्दावन जी ने यहीं रहकर अपनी काव्य रचना की थी। यहीं पर उनके पिता जी ने अपने साहस को प्रकट करके धर्म द्रोहियों का मान मर्दन करके जिन चैत्यालय बनवाया, जिससे धर्म की विशेष प्रभावना हुई थी। भावुक यात्रियों को इस घटना से धर्मप्रभावना का सतत उद्योग करने का पाठ हृदयाङ्गम करना चाहिए। बनारस विद्या का केन्द्र है। यहाँ पर हिन्दू विश्वविद्यालय दर्शनीय संस्था है। क्या ही अच्छा हो कि यहां पर एक उच्च-कोटि का जैन कालेज स्थापित किया जावे! यहां के बरतन और

जरी का कपड़ा प्रसिद्ध हैं। यहां से सिंहपुर (सारनाथ) और चन्द्रपुरी के दर्शन करने के लिए जाना चाहिए।

सिंहपुरी

सिंहपुरी बनारस से ५ मील दूर है। यहां श्री श्रेयांसनाथ भ० का जन्म हुआ था। एक विशाल जिनमन्दिर है, जिसमें श्रेयांसनाथ जी की मनोहर प्रतिमा विराजमान है। सारनाथ के अजायबघर में यहां खुदाई में निकली हुई प्राचीन दि० जैन मूर्तियां भी दर्शनीय हैं। अशोक का स्तम्भ मन्दिर जी के सामने ही खड़ा है। पास में ही बौद्धों के दर्शनीय विहार बने हैं। जैन धर्म प्रचार के लिए एक उपयोगी पुस्तकालय स्थापित किया जाना आवश्यक है। यहां से चन्द्रपुरी जावे।

चन्द्रपुरी

गंगा किनारे बसा हुआ एक छोटा सा चन्द्रौरी गांव प्राचीन चन्द्रपुरी की याद दिलाता है। यहीं गंगा किनारे सुदृढ़ और मनोहर दि० जैन मन्दिर और धर्मशाला बनी हुई है। यहीं चन्द्रप्रभु भ० का जन्म हुआ था। स्थान अत्यन्त रमणीक है। उसी मोटर से बनारस आवे और वहां से सीधा आरा जावे। किन्तु जो यात्रीगण श्रावस्ती और कहाऊँ गांव के दर्शन करना चाहें, उन्हें लखनऊ से देवरिया जाना चाहिए।

किष्किन्धापुर

वर्तमान का खूरवन्दोग्राम प्राचीन किष्किन्धापुर अथवा काकंदीनगर है। यहां पुष्पदन्त स्वामी के गर्भ और जन्म कल्याणक हुए हैं और उन्हीं के नाम का एक मन्दिर है। देवरिया से यहाँ आया जाता है।

ककुभग्राम

ककुभग्राम अब कहाऊँ गांव नाम से प्रसिद्ध है। गोरखपुर से बह ४६ मील की दूरी पर है। गुप्तकाल में यहां अनेक दर्शनीय

जिनमन्दिर बनाये गये थे, जो अब खण्डहर की हालत में पड़े हैं। उनमें से एकमें पार्श्वनाथ जी की प्रतिमा अब भी विराजमान है। ग्राम में उत्तर की ओर एक मानस्तम्भ दर्शनीय हैं, जिस पर तीर्थंकरों की दिगम्बर प्रतिमायें अंकित हैं। इसे सम्राट स्कन्दगुप्त के समय में मद्र नामक ब्राह्मण ने निर्माण कराया था इस अतिशययुक्त स्थान का जीर्णोद्धार होना चाहिये।

श्रावस्ती (सहेठ महेठ)

गोंड़ा जिला के अन्तर्गत बलरामपुर से पश्चिम में १२ मील पर सहेठ-सहेठ ग्राम ही प्राचीन श्रावस्ती है। यहां तीसरे तीर्थंकर सभवनाथ जी का जन्म हुआ था। यहां खुदाई में अनेक जिनमूर्तियां निकली हैं जो लखनऊ के अजायबघर मे मौजूद हैं। यहाँ का सुहृदध्वज (सुहेलदेव) नामक राजा जैन धर्मानुयायी था। उसने सैयदसालार को युद्ध में परास्त करके मुसलमानों के आक्रमण को निष्फल किया था।

आरा

आरा बिहार प्रान्त का मुख्य नगर है। चौक बाजार में बा० हरप्रसाद की धर्मशाला में ठहरना चाहिए। इस धर्मशाला के पास एक जिनचैत्यालय है, जिस में सोने और चांदी की प्रतिमायें दर्शनीय हैं। अपने प्राचीन मनोज्ञ मन्दिरों के कारण ही यह स्थान प्रसिद्ध है। यहां १४ शिखरबन्द मन्दिर और १३ चैत्यालय हैं। एक शिखरबन्द मन्दिर शहर से ८ मील की दूरी मसाढ़ ग्राम में है और दो शिखरबन्द मन्दिर धनुपुरा में शहर से दो मील दूर हैं। यहीं पर धर्मकुन्ज में श्रीमती प० चंदाबाई द्वारा संस्थापित "जैन महिलाश्रम" है, जिसमें दूर-दूर से आकर महिलायें शिक्षा ग्रहण करके विदुषी बनती हैं। वहीं एक कृत्रिम पहाड़ी पर श्री बाहुबलि भगवान की ११ फीट ऊँची खड्गासन प्रतिमा

अत्यन्त सुन्दर है। यहीं के एक मन्दिर में दि० जैन मुनिसंघ पर अग्नि उपसर्ग हुआ था– अग्नि की ज्वालाओं में शरीर भस्मीभूत होते हुये मुनिराज शान्त और वीरभाव से उसे सहन करते रहे थे। जैन धर्म की यह वीरतापूर्ण सहनशीलता अद्वितीय है। पुरुषों में क्या, महिलाओं-अबलाओं में भी वह आत्मबल प्रगट करती है कि वे धर्ममार्ग में अद्भुत साहस के कार्य प्रसन्नता से कर जाती हैं। आरा जैन धर्म के इस वीरभाव का स्मरण दिलाता हैं। यहाँ चौक में श्रीमान् स्व० बाबू देवकुमार जी द्वारा स्थापित 'श्रीजैन सिद्धांत भवन, नामक संस्था जैनियों में अद्वितीय है। यहां प्राचीन हस्तलिखित शास्त्रों का अच्छा संग्रह है जिन में कई कलापूर्ण, सचित्र और दर्शनीय हैं। आरा से पटना (गुलजार बाग) जाना चाहिए।

पटना

पटना मौर्यों की प्राचीन राजधानी पाटलिपुत्र है। जैनियों का सिद्धक्षेत्र है। सेठ सुदर्शन ने वीर भाव प्रदर्शित करके यहीं से मोक्ष प्राप्त किया था। सुरसुन्दरी सदृश अभयारानी के काम कलापों के सन्मुख सेठ सुदर्शन अटल रहे थे। आखिर वह मुनि हुए और मोक्ष गए। गुलजारबाग स्टेशन के पास ही एक टेकरी पर चरणपादुकायें विराजमान हैं, जो यात्री को शीलव्रती बनने के लिए उत्साहित करतीं हैं। वहीं पास में एक जैन मन्दिर और धर्मशाला है। शिशुनागवंश के राजा अजातशत्रु, श्री इन्द्रभूति और सुधर्माचार्य जी के सम्मुख जैन धर्म में दीक्षित हुए थे। उनके पोते उदयन ने पाटलिपुत्र नगर बसाया था और सुन्दर जिन मंदिर निर्माण कराये थे। यूनानियों ने इस नगर की खूब प्रशंसा की थी। मौर्यकाल की दिगम्बर जैन-प्रतिमायें यहां भूगर्भ से निकली हैं। वसी दो प्रतिमायें पटना अजायबघर में मौजूद हैं। दि० जैनियों के यहां ५ मंदिर व एक चैत्यालय है। जैनधर्म का सम्पर्क पटना से अति

प्राचीनकाल का है। यहां से बिहार शरीफ जाना चाहिए, जहां एक दि० जैन मन्दिर में दर्शनीय जिनबिम्ब हैं। बिहार शरीफ से नालन्दा को बस. टैक्सी मिलती हैं। वहां से तांगे मिलते हैं। नालन्दा से बड़गांव तीन मील दूर है।

कुण्डलपुर

कहते हैं कि यह कुण्डलपुर अन्तिम तीर्थङ्कर भ० महावीर का जन्म स्थान है, परन्तु इतिहासज्ञ विद्वानों का मत है कि मुजफ्फरपुर जिले का बसाढ़ नामक स्थान प्राचीन कुण्डग्राम है, जहां भगवान् का जन्म हुआ और अब यह सर्वसम्मति से भ० महावीर का जन्म स्थान मान लिया गया है। यह स्थान प्राचीन नालंदा है; जहाँ पर भ० महावीर का सुखद विहार हुआ था। यहाँ एक दि० जैन मन्दिर में भ० महावीर की अति मनोहर दर्शनीय प्रतिमा है। इस स्थान पर जमीन के अन्दर से एक विशाल जिनमूर्ति निकली है, जो देखने योग्य है। यहाँ से राजगृह जाना चाहिये।

राजगृह-पंचशैल (पंचपहाड़ी)

राजगृह नगर भ० महावीर के समय में अत्यन्त समुन्नत और विशाल नगर था। शिशुनागवंशी सम्राट श्रेणिक बिम्बसार की वह राजधानी था। भ० महावीर के सम्राट श्रेणिक; अनन्य भक्त थे। जब-२ भ० महावीर का समोशरण राजगृह के निकट अवस्थित विपुलाचल पर्वत पर आया तब-तब वह उनकी वन्दना करने गये। उन्होंने वहाँ कई जिन मन्दिर बनवाये। वहाँ पर दि० जैन मुनि-संघ प्राचीन काल से विद्यमान था। सम्राट श्रेणिक के समय की शिलालेख और कीर्तियाँ यहाँ से उपलब्ध हुई हैं, जिनमें किन्हीं पर उनका नाम भी लिखा हुआ है। निस्सन्देह यह राजगृह प्राचीनकाल से जैनधर्म का केन्द्र रहा है। भ० महावीर का धर्मचक्र प्रवर्तन

इसी पवित्र स्थान पर हुआ था—यहीं पर अनादिमिथ्यादृष्टियों के पापमल को धोकर जिनेन्द्रवीर ने उन्हें अपने शासन का अनुयायी बनाया था। श्रेणिक सा शिकारी राजा और कालसौकरिपुत्र जैसा कसाई का लड़का भगवान् की शरण में आये और जैनधर्म के अनन्य उपासक हुए थे। उनका आदर्श यही कहता है कि जैनधर्म का प्रचार दुनिया के कोने-कोने में हर जाति और मनुष्य में करो। किन्तु राजगृह भ० महावीर से पहले ही जैनधर्म के संसर्ग में आ चुका था। तीसवें तीर्थङ्कर श्री मुनिसुब्रतनाथजी का जन्म यहीं हुआ था, यहीं उन्होंने तप किया था और नीलवन के चंपकवृक्ष के तले वह केवलज्ञानी हुए थे। मुनिराज जीवन्धर, श्वेतसुन्दार्व, वैश ख, विद्युच्चर, गन्धभादन, प्रीतिकंर, धनदत्तादि यहां से मुक्त हुए और अन्तिम-केवली जम्बूकुमार भी यही से मुक्त हुये थे। तीर्थरूप में राजगृह की प्रसिद्धि भ० महावीर से पहले की है। सोपारा (सूरत के निकट) से एक आर्यिका संघ यहां की वन्दना करने ईवी की आरम्भिक अथवा पूर्व शताब्दियों में आया था। धीवरी पूतिगंधा भी उस संघ में थी। वह क्षुल्लिका हो गई थी और यहीं नीलगुफा में उन्होंने समाधिमरण किया था। निस्संदेह यह स्थान पतितोद्धारक है और बहुत ही रमणीक है। वहां कई कुण्डों में निर्मल गरम जल भरा रहता है, जिनमें नहाकर पंच पहाड़ों की वन्दना करना चाहिये। सबसे पहले विपुलाचल पर्वत आता है, जिस पर चार जिन मंदिर हैं। भ० मुनिसुब्रतनाथ के चार कल्याणकों का स्मारक इसी पर्वत पर है। नया एक मन्दिर है। यहां से दूसरे रत्नगिरि पर्वत पर जाना चाहिए, जिस पर तीन मन्दिर है। उपरांत उदयगिरि पर जाना चाहिये। यह पर्वत बहुत ही उत्तम और मनोहर है। इस पर दो मंदिर है। यहाँ दो प्राचीन दिगम्बर मन्दिर भी खुदाई में निकले हैं। इनकी मूर्तियां नीचे लाल मन्दिर में पहुंचा दी गई हैं। यहां से तलहटी में होकर चौथे श्रमणगिरिपर जावें।

जहां पर तीन मन्दिर हैं। चौथे पहाड़ से उतर कर पाँचवें पहाड़के रास्ते में सोनभण्डार गुफा मिलती है। यहाँ दीवालों पर प्रतिमायें बनी हुई हैं। अंतिम पर्वत वैभारगिरि है, जिम पर पांच मन्दिर हैं। यहाँ एक विशाल प्राचीन मंदिर निकला है जिसमें २४ कमरे बने हुए हैं। यह लगभग १२०० वर्ष प्राचीन है। मूर्तियाँ विराजमान हैं। इन सब मंदिरों के दर्शन करके यहाँ से एक मील दूर गणधर भ० के चरणों को वंदना करने जावे। पहाड़ की तलहटी में सम्राट् श्रेणिक के महलों के निशान पाये जाते हैं। उन्होंने राजगृह अतीव सुंदर निर्माण कराया था। यहाँ से १२ मील पावापुर बस में जावे।

पावापुर

पावापुर तीर्थंकर भ० महावीर निर्वाग धाम है अतः यह पावापुर अन्तिमतीर्थ कर भ० महावीर का निर्वाणधाम है अतः यह पवित्र और पूज्य तीर्थ स्थान है। इसका प्राचीन नाम अपापापुर (पुण्यभूमि) था। भ० महावीर ने यहीं योग साधा और शेष अघातिया कर्मों को नष्ट करके मोक्ष प्राप्त किया था। उनका यह मन्दिर 'जलमंदिर' कहलाता हैं और तालाब के बीच में खड़ा हुआ अति सुन्दर लगता है। इनमें भ० महावीर, गौतम स्वामी और सुधर्मस्वामी के चरण चिन्ह है। इसके अतिरिक्त ८ मंदिर एक स्थान पर हैं। इन सबके दर्शन करके यहां से १३ मील दूर गुणावा तीर्थ जाना चाहिये।

गुणावा

कहा जाता है कि गुणावा वह पवित्र स्थान है जहाँ से इन्द्रभूति गौतमगणधर मुक्त हुये थे। यहाँ एक नवीन मन्दिर है उसके साथ धर्मशाला है। दूसरा मंदिर तालाब के मध्य बना हुआ सुहावना लगता हैं। मंदिर में गणधर के चरण हैं। यहाँ से डेढ़ मील

नवादा स्टेशन (पूर्वीय रेलवे) को जाना चाहिए जहां से नाथनगर या भागलपुर का टिकट लेना चाहिये।

नाथनगर

स्टेशन से आधामील दूर धर्मशाला में ठहरे। यह प्राचीन चम्पापुर नगर हैं, जहां तीर्थंकर वासुपूज्य स्वामींके पाँचोंकल्याणक हुए थे। यहीं प्रख्यात् हरिवंश की स्थापना हुई थी, यही नगर गगा तट पर बसा हुआ था, जहां धर्मघोष मुनि ने समाधिमरण किया था। गंगा नदी के एक नाले पर जिनका नाम चम्पानाला है, एक प्राचीन जिनमंदिर दर्शनीय है। नाथनगर के निकट तीन मदिर दि० जैनियों के हैं। यह सिद्धक्षेत्र है। यहां से पद्मरथ, अचल, अशोक आदि अनेक मुनि मुक्त हुए थे।

भागलपुर

नाथनगर से ३ मील भागलपुर शहर में कोतवाली के पास जिनमंदिर और जैन मंदिर धर्मशाला हैं। भागलपुरी में टसरी कपड़ा अच्छा मिलता है। यहां से बस या ट्रेन द्वारा मंदारगिरि को जावें।

मंदारगिरि

गांव में एक धर्मशाला व मन्दिर हैं। यहां से १ मील दूर मंदारगिरि पर्वत है। श्री वासुपूज्य भगवान का तप और मोक्ष-कल्याणक स्थान यही है। पर्वत पर दो प्राचीन शिखरबन्द मंदिर हैं। स्थान रमणीक है। वापस भागलपुर आकर गया का टिकट लेवें।

गया (कुलुहा पहाड़)

स्टेशन से डेढ़ मील दूर जैन भवन (धर्मशाला) में ठहरे। यह बौद्धों और हिन्दुओं का तीर्थ है। दो जिनमंदिर भी हैं। यहां

ं ३८ मील के फासले पर कुलुहा पहाड़ है, जिसे 'जैनीपहाड़'
ाम से पुकारते हैं। श्री शीतलनाथ भ० ने इस पर्वत पर
ापश्चरण किया था। और केवल ज्ञान प्राप्त किया था। कुलुहा
ार्वत से ५-६ मील दूर पर भोंदल गांव है। यही प्राचीन भद्रिलपुर
है जहां शीतलनाथ स्वामी के गर्भ और जन्म कल्याणक हुए
थे। कुलुहा पहाड़ पर प्राचीन प्रतिमायें दर्शनीय हैं, परन्तु रास्ता
खराब है वहां से गया लौटे। गया से ईसरी (पारसनाथहिल) स्टेशन
उतरे, जहाँ धर्मशाला में ठहरे। यहाँ से सम्मेदशिखर पर्वत दिखाई
ड़ता है। गाड़ी या मोटर सर्विस से पहाड़ की तलहटी मधुवन
में पहुँच जावे।

मधुवन (सम्मेदशिखर पर्वत)

मधुवन में तेरापंथी और बीसपंथी कोठियों के आधीन
ठहरने के लिए कई धर्मशालाये हैं। दि० जैन मंदिर भी अनेक है,
जिनकी रचना सुन्दर और दर्शनीय हैं। बाजार में सब प्रकार का
जरूरी सामान मिलता है। पहले मधुवन को 'मधुरवनम्'
कहते थे।

सम्मेदाचल वह महापवित्र तथा अत्यन्त प्राचीन सिद्धक्षेत्र
है, जिसकी वन्दना करना प्रत्येक जैनी अपना अहोभाग्य समझता
है। अनन्तानन्त मुनिगण यहां से मुक्त हुए है—अनंत तीर्थङ्कर
भगवान अपनी अमृतवाणी और दिव्यदर्शन से इस तीर्थ को
पवित्र बना चुके है। इस युग के अजितनाथादि बीस तीर्थङ्कर
भी यहीं से मोक्ष पधारे थे। मधुकैटभ जैसे दुराचारी प्राणी
भी यहाँ के पतीत पावन वातावरण में आकर पवित्र हो गए।
यहीं से वे स्वर्ग सिधारे। निस्सन्देह इस तीर्थराज की महिमा
अपार है। इन्द्रादिकदेव उसकी वंदना करके हीं अपना जीवन
सफल हुआ समझते हैं। क्षेत्र का प्रभाव इतना प्रबल है कि यदि
कोई भव्य जीव इस तीर्थ की यात्रा वंदना भाव सहित करे तो

उसे पूरे पचास भव भी धारण नहीं करने पड़ते, बल्कि ४६ भवों में ही वह संसार भ्रमण से छूटकर मोक्ष लक्ष्मी का अधिकारी होता है। पं० द्यानतराय जी ने यहाँ तक कहा है कि–

"एक वार वंदे जो कोई। ताहि नरक पशुगति नहीं होई।।"

इस गिरिराज की वंदना करने से परिणामों में निर्मलता होती है, जिससे कर्मबंध कम होता है–आत्मा में वह पुनीत संस्कार अत्यन्त प्रभावशाली हो जाता है कि जिससे पाप–पंक में वह गहरा फंसता ही नहीं है। दिनोंदिन परिणामों की विशुद्धि होने से एक दिन वह प्रबल पौरुष प्रकट होता है, जो उसे आत्मस्वातंत्र अर्थात् मुक्ति नसीब कराता है। सम्मेदाचल की वंदना करते समय इस धर्म सिद्धान्त का ध्यान रखें और बीस तीर्थङ्करों के जीवन चरित्र और गुणों में अपना मन लगाये रक्खें।

इस सिद्धाचल पर देवेन्द्र ने आकर जिनेन्द्र भगवान की निर्वाण–भूमियाँ चिह्नित कर दीं थीं–उन स्थानों पर सुन्दर शिखरें चरण चिन्ह सहित निर्माण की गई थी। कहते हैं कि सम्राट श्रेणिक के समय में वे अतीवशीर्ण अवस्था में थी, यह देखकर उन्होंने स्वयं उनका जीर्णोद्धार कराया और भव्य टोंके निर्माण करा दी। कालदोष से वे भी नष्ट हो गई, जिस पर अनेक भव्य दानवीरों ने अपनी लक्ष्मी का सदुपयोग जीर्णोद्धार में लगा कर किया। सं० १६१६ में यहाँ पर दि० जैनियों का एक महान् जिनबिम्ब प्रतिष्ठोत्सव हुआ था। पहले पालगंज के राजा इस तीर्थ की देखभाल करते थे। उपरान्त दि० जैनों का यहाँ जोर हुआ– किन्तु मुसलमानों के आक्रमण में यहाँ का मुख्य मंदिर नष्ट हो गया। तब एक स्थानीय जमीदार पार्श्वनाथ जी की प्रतिमा को अपने घर उठा ले गया और यात्रियों से कर वसूल करके दर्शन कराता था। सन् १८२० में कर्नल

मैकेंजी सा० ने अपनी आँखों से यह हृदय देखा था, पर्याप्त यात्रियों के इकट्ठे होनेपर राजा करवसूलकरके दर्शन कराता था जो कुछ भेट चढ़ती, वह सब राजा ले लेता था। पार्श्वनाथ की टोंक वाले मंदिर में दिगम्बर जैन प्रतिमा ही प्राचीनकाल से रही है।

"image of Parsvanath to represent the saint sitting naked in the attitude of medittation," H. H. Risley, "Statistical Actt. of Bengal XVI, 207 ff

अब दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनो ही सम्प्रदायों के जैनी इस तीर्थ को पूजते और मानते हैं।

उपरली कोठी से ही पर्वत वंदना का मार्ग प्रारम्भ होता है। मार्ग में लंगड़े-लूले अपाहिज मिलते हैं, जिनको देने के लिए पैसे साथ में ले लेना चाहिए। वंदना प्रातः ३ बजे से प्रारम्भ करनी चाहिए। दो मील चढ़ाई चढ़ने पर गंधर्वनाला पड़ता है। फिर एक मील आगे आगे चढ़ने पर दो मार्ग हो जाते हैं। बाई तरफ का मार्ग पकड़ना चाहिए, क्योंकि वही सीतानाला होकर गौतमस्वामी की टोंक को गया है। दूसरा रास्ता पार्श्वनाथ जी की टोंक से आता है। सीतानाला में पूजा सामग्री धो लेना चाहिए यहाँ से एक मील तक पक्की सीढ़ियाँ हैं फिर एक मील कच्ची सड़क है। कुल ६ मील की चढ़ाई है। पहले गौतमस्वामी की टोंक की वंदना करके बाँये हाथ की तरफ वंदना करने जावे। दसवीं श्री चन्द्रप्रभु जी की टोंक बहुत ऊँची हैं। श्री अभिनन्दन नाथ जी की टोंक से उतर कर तलहटी में जल मंदिर में जाते हैं और फिर गौतमस्वामी की टोंक पर पहुँच कर पश्चिम दिशा की ओर वंदना करनी चाहिए। अन्त में भ० पार्श्वनाथ की स्वर्णभद्र टोंक पर पहुंच जावे। यह टोंक सबसे ऊँची है और यहां का प्राकृतिक दृश्य बड़ा सुहावना हैं। वहाँ पहुंचते ही यात्री अपनी थकावट भूल जाता है और जिनेन्द्र पार्श्व की चरण वंदना करते

ही आत्माह्लाद में निमग्न हो जाता है। यहाँ विश्राम करके दर्शनपूजन सामायिक करके लौट आना चाहिए। रास्ते में बीस पंथी कोठी की ओर से जलपान का प्रबन्ध है। पर्वत समुद्र तल से ४४८० फीट ऊँचा है। इस पर्वतराज का प्रभाव अचिंत्य हैं-कुछ भी थकावट नहीं मालूम होती है। नीचे मधुवन में लौटकर वहाँ के मन्दिरों के दर्शन करके भोजनादि करना चाहिए। मनुष्य जन्म पाने को सार्थकता तीर्थयात्रा करने में हैं और सम्मेदाचल की वंदना करके मनुष्य कृतार्थ हो जाता है। यहां की यात्रा करके वापस ईशरी (पारसनाथ) स्टेशन आवे और हावड़ा का टिकट लेकर कलकत्ता पहुँचे।

कलकत्ता

कलकत्ता बंगाल की राजधानी और भारत का सबसे बड़ा शहर है। स्टेशन से एक मील की दूरी पर बड़ा बाजार में श्री दि० जैन भवन (धर्मशाला) सुन्दर और शहर के मध्य है। इसके पास ही कलकत्ते का मुख्य बाजार हरिसन रोड़ है। वहां (१) चावल पट्टी यहां के मन्दिर में अच्छा शास्त्र भंडार भी है। (२) पुरानीं वाड़ी (३) लोअर चितपुर रोड़ (४) बेल गछिया में दर्शनीय दि० जैन मंदिर हैं। दर्शन–पूजन की श्रावकों को सुविधा है। राय बद्रीदास जी का श्वे० मंदिर भी अच्छी कारीगरी का है। कलकत्ते में कार्तिक सुदी १५ को दोनों सम्प्रदायों का सम्मिलित रथोत्सव होता है। अजायबघर में जैन मूर्तियां दर्शनीय हैं। खेद है कि यहां पर जैनियों की कोई प्रमुख सार्वजनिक संस्था नहीं है, जिस से जैन धर्म की वास्तविक प्रभावना हो। यहां के देखने योग्य स्थान देखकर उदयगिरि खंडगिरि जावे, जिसके लिए भुवनेश्वर का टिकट लेवें।

खडगिरि-उदयगिरि

भुवनेश्वर से पाँच मील पश्चिम की ओर उदयगिरि और खंडगिरि नामक दो पहाड़ियाँ हैं। रास्ते मे भुवनेश्वर शहर पड़ता

हैं, जिसमें एक विशाल शिवालय दर्शनीय है। मार्ग में घने वृक्षों का जंगल है। इन पहाड़ियों के बीच में एक तंग घाटी है। यहाँ पत्थर काटकर बहुत सी गुफायें और मंदिर बनाये गये हैं। जो ईस्वी सन् से करीब डेढ़ सौ वर्ष पहले से पाँच सौ वर्ष बाद तक के बने हुए हैं। यह स्थान अत्यन्त प्राचीन और महत्वपूर्ण है। 'उदयगिरि'— पहाड़ी का प्राचीन नाम कुमारी पर्वत है।

इस पर्वत पर से ही भगवान् महावीर ने आकर उड़ीसा निवासियों को अपनी अमृतवाणी का रस पिलाया था। अन्तिम तीर्थङ्कर का समवरण आने कारण यह स्थान अतिशयक्षेत्र है। उदयगिरि ११० फुट ऊँचा है। इसके कटिस्थान में पत्थरों को काटकर कई गुफायें और मन्दिर बनाये गए हैं। पहले 'अलकापुरी' गुफा मिलती है, जिसके द्वार पर हाथियों के चिन्ह बने हैं फिर 'जयविजय' गुफा है उसके द्वार पर इन्द्र बने हैं। आगे 'रानी गुफा है' जो देखने योग्य है। इस गुफा में नीचे ऊपर बहुत-सी ध्यानयोग्य अन्तर गुफायें हैं। आगे चलने पर 'गनेशगुफा' मिलती है, जिसके बाहर पाषाण के दो हाथी बने हुए हैं। यहां से लौटने पर 'स्वर्गगुफा', 'मध्यगुफा' और 'पातालगुफा' नामक गुफायें मिलती हैं। इन गुफाओं में चित्र भी बने हुए हैं और तीर्थङ्करों की प्रतिमायें भी हैं। पातालगुफा के ऊपर 'हाथीगुफा' १५ गज पश्चिमोत्तर है। यह वही प्रमुखगुफा है जो जैनसम्राट खारबेल के शिलालेख के कारण प्रसिद्ध है। खारबेल कलिंग देश के चक्रवर्ती राजा थे— उन्होंने भारत वर्ष की दिग्विजय की थी और मगध के राजा पुष्यमित्र को परास्त छत्र-भृङ्गारादि चीजों के साथ 'कलिंग जिन ऋषभदेव' की वह प्राचीन मूर्ति वापस कलिङ्ग लाये थे, जिस नन्द सम्राट पाटलिपुत्र ले गये थे। इस प्राचीन मूर्ति को सम्राट खारवेल ने कुमारी पर्वत पर अर्हतप्रासाद बनवाकर विराजमान किया था। उन्होंने स्वयं एवं उनकी रानी ने इस पर्वत पर कई जिन मन्दिर

जिन मूर्तियां, गुफा और स्तम्भ निर्माण कराये थे और कई धर्मोत्सव किए थे। यहाँ की सब मूर्तियाँ दिगम्बर हैं। सम्राट खारबेल के समय से पहले ही यहाँ निर्ग्रन्थ श्रमण संघ विद्यमान था। निर्ग्रन्थ (दिग०) मुनिगण इन गुफाओं में रहते और तपस्या करते थे। स्वयं सम्राट खारबेल ने इस पर्वत पर रहकर धार्मिक यम नियमों का पालन किया था। उनके समय में अङ्ग ज्ञान विलुप्त हो चला था। उसके उद्धार के लिए उन्होंने मथुरा, गिरिनार और उज्जैनी आदि जैन केन्द्रोंके निर्ग्रन्थाचार्यों को संघ सहित निमन्त्रित किया था। निर्ग्रन्थ श्रमण संघ यहाँ एकत्र हुआ और उपलब्ध द्वादशाङ्गवाणी के उद्धार का प्रशंसनीय उद्योग किया था। इन कारणों की अपेक्षा कुमारी पर्वत एक महा पवित्र तीर्थ हैं और पुकार-पुकार कर यही बताता है कि जैनियों ! जिनवाणी की रक्षा और उद्धार के लिए सदा प्रयत्नशील रहो।

खण्डगिरि पर्वत १२३ फीट उँचे घने पर्वतों से लदा हुआ है खड़ी सीढ़ियों से ऊपर जाया जाता है। सीढ़ियों के सामने ही 'खण्डगिरिगुफा' है जिसके नीचे ऊपर पांच गुफायें और बनी हैं, 'अनन्तगुफा' में १॥ हाथ की कायोत्सर्ग जिन प्रतिमा विराजमान है। पर्वत के शिखर परएक छोटा औरएक बड़ा दि० जैन मंदिर है। छोटा मंदिर हाल का बना हुआ है परन्तु उसमें एक प्राचीन प्रतिता प्रातिहार्य युक्त विराजमान है। बड़ा मन्दिर और दो शिखरों वाला है इस मंदिर को करीब २०० वर्ष पहले कटक के सुप्रसिद्ध दिग० जैन श्रावक स्व० चौधरी मंजूलाल परवार ने निर्माण करवाया था, परन्तु इस मंदिर से भी प्राचीन काल की जिन प्रतिमायें विराजमान हैं। मंदिर के पीछे की ओर सैकड़ों भग्नावशेष पाषाणादि पड़े हैं, जिनमें चार प्रतिमायें नन्दीश्वर की बताई जाती थीं। इस स्थान को 'देव सभा' कहते हैं। 'आकाश गंगा' नामक जल से भरा कुण्ड है। इसमें मुनियों के

ध्यान योग्य गुफायें हैं। आगे 'गुप्त गंगा', श्यामकुण्ड' और 'राधाकुण्ड' नामक कुण्ड बने हुये हैं। फिर राजा इन्द्र-केशरी की गुफा हैं, जिसमें आठ दि० जैन खड्गासन प्रतिमायें अङ्कित हैं। उपरान्त २४ तीर्थङ्करों की दिग० प्रतिमायों वाली आदिनाथ गुफा है। अनंत: बारहभुजी गुफा मिलती हैं, जिनमें भी १३ जिन प्रतिमायें दक्षिणी मूर्तियों सहित हैं। यहां कुल ११७ गुफायें हैं। इन सबकी दर्शनपूजा करकेयात्रियोंको भुवनेश्वर स्टेशन लौट आना चाहिए। इच्छा हो तो जगन्नाथ पुरी जाकर समुद्र का दृश्य देखना चाहिए। पुरी हिन्दुओं का खास तीर्थ है। जगन्नाथ जी के मंदिर के दक्षिण द्वार पर श्री आदिनाथ जी की प्रतिमा है। वहाँ से खुरदार रोड़ होकर मद्रास का टिकट लेना चाहिए, बीच में कोहन तीर्थस्थान वही हैं।

मद्रास

मद्रास वाणिज्य, व्यापार और शिक्षा का मुख्य केन्द्र है और एक बड़ा बन्दरगाह है। एक दिगम्बर जैन मंदिर और चैत्यालजय हैयेंअब तो दिगम्बर जैन धर्मशाला भी बन गई है। यहाँके अजा-यबघर में अनेक दर्शनीय प्रतिमायें हैं। विक्टोरिया पब्लिक हाल में काले पाषाण की श्री गोम्मटस्वामी की कायोत्सर्ग प्रतिमा अति मनोहर है। मद्रास के आस-पास जैनियों के प्राचीन स्थान बिखरे हैं। प्राचीन मैलापुर समुद्र में डूब गया हैं और उसकी प्राचीन प्रतिमा, जो श्री नेमिनाथ की थी वह चिताम्बूर में विराजमान हैं। यहां नेमिनाथ स्वामी का प्रसिद्ध मंदिर था। इसमें कुन्दकुन्द आचार्य के चरण विराजमान थे। यह नयनार मंदिर कहलाता था। नयनार का अर्थ जैन है। शैवों ने इस पर अधिकार कर लिया है। उसके दर्शन करना चाहिए। यही वह स्थान है, जहां पर तामिल के प्रसिद्ध नीति-ग्रन्थ 'कुरुल' के रचयिता रहते थे। वह ग्रन्थ श्री कुन्दकुन्दाचार्य की रचना है। उसमें मैलापुर की चर्चा

है। इस मंदिर से अब चरण भी हटा दिये गये हैं। पुलहल भी एक समय जैनियों का गढ़ था। कुरुम्ब जाति के अर्धसभ्य मनुष्य को एक जैनाचार्य ने जैनधर्म में दीक्षित किया था और वह अपना राज्य स्थापित करनेमें सफल हुये थे। कुरुम्बाधिराज की राजधानी पुलहलथी। वहाँ पर एकमनोहर ऊँचा जिनमंदिर बना हुआ था। मद्रास से १० मील की दूरी पर श्री क्षेत्र 'पुम्कुल मायावर' के मंदिर दर्शर करने योग्य हैं। पौन्नेरी ग्राम में एक पर्णकुटिका में श्री वर्द्धमान स्वामी की प्रतिमा कालेपत्थरकीकायोत्सर्ग जमीनसे मिली हुई विराजमान है। वह भी दर्शनीय है। गर्ज यह कि मद्रास का क्षेत्र प्राचीनकाल से जैनधर्म का केन्द्र रहा है। आज इस शहर में जैनधर्म को बतलाने वाला एक बड़ा पुस्तकालय बहुत जरूरी है। यहां से कांजीवरन् जो प्राचीन कांची है और जहां पर अकलंक स्वामीने बौद्धों को राजसभामें परास्त किया था, यहां पल्लव वंशी राजाओं का राज्य था जो जैन थे। यहां कामाक्षी का मंदिर है जो पहले जैन मंदिर था, होता हुआ पोन्नूर जाये।

पोन्नूर-तिरुमलय

पोन्नूर ग्राम से ६ मील दूर तिरुमलय पर्वत है। वह ३५० गज ऊँचा है। सौ गज ऊपर सीढ़ियों से चढ़ने पर चार मंदिर मिलते हैं, जिनके आगे एक गुफा है। उस गुफा में भी दो दर्शनीय बड़ी-बड़ी जिन प्रतिमायें हैं। श्री आदिनाथ जी के मुख्य गणधर वृषभसेन की चरणपादुका भी हैं, जिनको सब लोग पूजते हैं। गुफा में चित्रकला भी दर्शनीय हैं। गुफा के पर्वत की चोटी पर तीन मंदिर और हैं। इस पहाड़ी पर आचार्य कुन्दकुन्द तपस्या किया करते थे। चम्पाके एक पेड़ के नीचे चरण बने हुए हैं जो कुन्दकुन्द के कहे जाते हैं। यहां के शिलालेखों से प्रगट है कि बड़े-बड़े राजा-महाराजाओं ने यहां जिनमन्दिर बनवाये थे और ऋषिगण यहां

तपस्या करते थे। यहांके 'कुन्दवई' जिनालय का सूर्यवंशी राजराज महाराजा की पुत्री अथवा पांचवं चालुक्म राजा विमलादित्य की बड़ी बहनने बनवाया था। श्री परवादिमल्ल के शिष्य श्रीअरिष्ट-नेमि आचार्य थे, जिन्होंने एक यक्षिणी की मूर्ति निर्माण कराई थी। इस प्रकार यह तीर्थ अपनी विशेषता रखता है। पौन्नूर से वापस मद्रास आवे, जहां से बेंगलोर जावें।

बेंगलौर

रियासत मैसूर की नई राजधानी और सुन्दर नगर है। दि० जैन मन्दिर में ६ प्रतिमाये बड़ी मनोज्ञ हैं। धर्मशाला भी है। यहां कई दर्शनीय स्थान है, यहां से आरसीकेरी जाना चाहिए।

आरसीकेरी

आरसीकेरी प्राचीन जैन केन्द्र है। होयसल राजाओं के समय में यहां कई सुन्दर जिन मंदिर बने थे, जिनमें से सहस्रकूट जिनालय टूटी फूटी हालत में है। उसमें संगतराशी का काम अति मनोहर है। जैन मंदिर में एक प्रतिमा धातुमयी गोम्मट स्वामी की महा मनोज्ञ प्रभायुक्त हैं। इस ओर इस जैन मदिर को 'बसती' कहते हैं। यहां से श्रवणबेलगोल (जैनबद्री) के लिए मोटर लारी जाती है। कोई २ यात्री हासन स्टेशन से जैनबद्री जाते हैं। लारी का किराया बराबर ही है।

श्रवणबेलगोल (जैनबद्री)

श्रवणबेलगोल जैनियों का अति प्राचीन और मनोहर तीर्थ है। उसे उत्तर भारतवासी 'जैनबद्री' कहते हैं। यह 'जैन काशी' और 'गोमटतीर्थ' नामों से भी प्रसिद्ध रहा है। यह अतिशय क्षेत्र कर्नाटक प्रान्त के हासन जिले में चन्द्ररायपट्टन नगर से ६ मील है। यहाँ पर श्री बाहुबलि स्वामी की ५७ फीट ऊंची अद्वितीय

विशालकाय प्रतिमा है, जिसके समान संसार में और कोई प्रतिमा नहीं है। विदेशों से भी यात्री उनके दर्शन करने आते हैं। स्टेशन से आने पर लगभग १० – ११ मील दूर से ही इस दिव्यमूर्ति के दर्शन होते हैं। दृष्टि पड़ते ही यात्री अपूर्व शान्ति अनुभव करता हैं और अपना जीवन सफल हुआ मानता है। हम रात्रि में श्रवण-बेलगोल पहुचे थे, परन्तु वह महामस्तकाभिषेकोत्सव का सुअवसर था। सर्चलाईट की साफ़ रोशनीमें गोम्मट–भगवान के दर्शन करते नयन तृप्त नही होते थे। उनकी पवित्र स्मृति आज भी हृदय को प्रफुल्लित और शरीर को रोमाँचित कर देती है—भावविशुद्धि की एक लहर सी दौड़ जाती है। धन्य है वह व्यक्ति जो श्रवण-बेलगोल के दर्शन करता है और धन्य है महाभाग चामुण्डराय जिसने यह प्रतिमा निर्माण कराई।

दि० जैन साधुओं को 'श्रमण' करते हैं। कन्नड़ी में 'बेल' का अर्थ 'श्वेत' हैं और 'गोल' तालाब को कहते हैं। इसलिए श्रवणबेलगोल का अर्थ होता है—यह जैन साधुओ का श्वेत सरोवर। दि० जैन साधुओं की तपोभूमि रही है। राम रावण काल के बने हुये जिनमंदिर यहां पर एक समय मौजूद थे। अन्तिम श्रुतकेवली भद्रबाहुस्वामी बारह वर्ष के दुष्काल मे जैन संघ की रक्षा करने के लिए दक्षिण भारत को आये थे और इस स्थान पर उन्होंने संघ सहित तपश्चरण किया था। श्रवणबेलगोल के चन्द्रगिरि पर्वत पर 'भद्रबाहुगुफा' में उनके चरणचिन्ह विद्यमान हैं। वहीं उन्होंने समाधिमरण किया था। वही रहकर सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य ने, जो दि० मुनि होकर उनके साथ आये थे उनकी वैयावृत्ति की थी। सम्राट चन्द्रगुप्त की स्मृति में यहाँ जिन मन्दिर और चित्रावली बनी हुई है। उनके अनुयायी मुनिजनों का एक 'गण' भी बहुत दिनों तक यहां रहा था। निस्संदेह श्रवणबे-लगोल महापवित्र तपोभूमि है। यहाँ की जैनाचार्य—परम्परा

दिग्दिगान्तरों में प्रख्यात् थी—यहाँ के आचार्यों ने बड़े बड़े राजा, महाराजाओं से सम्मान प्राप्त किया था और उन्हें जैन धर्म की दीक्षा दी थी। श्रवणबेलगोल पर राजा, महाराजा, रानी, राजकुमार, बड़े २ सेनापति, राजमंत्री और सब ही वर्ग के मनुष्यों ने आकर धर्माराधना की है। उन्होंने अपने आत्मबल को प्रगट करने के लिए यहां सल्लेखनाव्रत धारण किया—भद्रबाहु स्वामी के स्थापित किये हुये आदर्श को जैनियों ने खूब निभाया। श्रवणबेलगोल इस बात का प्रत्यक्ष साक्षी है कि जैनियों का साम्राज्य देश के लिए कितना हितकर था और उनके सम्राट किस तरह धर्म साम्राज्य स्थापित करने के लिए ललायित थे। श्रवणबलगोल का महत्व प्रत्येक जैनी को आत्म वीरता का संदेश देने में गर्भित हैं। यहां लगभग ५०० शिलालेख जैनियों का पूर्व गौरव प्रकट करते हैं। +

श्रवणबेलगोल गांव के दोनों ओर दो मनोहर पर्वत (१) विंध्यगिरि अथवा इन्द्रगिरि और (२) चन्द्रगिरि हैं। गांव के बीच में कल्याणी झील है। इसलिए यहां का प्राकृतिक सौन्दर्य चित्ताकर्षक है। इन्द्रगिरि को यहां के लोग दोड्ड-बेट्ट (बड़ा पहाड़) कहते हैं जो मैदान से ४०० फीट ऊँचा है। इस पर चढ़ने के लिए पांच सौ सीढ़ियां बनी हुई हैं। इस पर्वत पर चढ़ते ही पहले ब्रह्मदेव मन्दिर पड़ता है, जिसकी अटारी में पार्श्वनाथ स्वामी की एक मूर्ति है। पर्वत की चोटी पर पत्थर की प्राचीन दीवार का घेरा है, जिसके अन्दर बहुत से प्राचीन जिन मन्दिर हैं। घुसते ही एक छोटा सा मन्दिर "चौबीस तीर्थङ्कर बसती" नामक मिलता है, जिसमें १६४८ ई० का स्थापित किया हुआ

+देखो श्री माणिकचन्द ग्रन्थमाला का "जैन शिलालेख संग्रह" भा० १

चौबीसी पट्ट विराजमान हैं। इस मन्दिर के उत्तर पश्चिम में एक कुण्ड हैं। उसके पास चेन्नण्ण बस्ती नामक एक दूसरा मन्दिर है, जिसमें चन्द्रनाथ भ० की पूजा होती है। मन्दिर के सामने एक मानस्तम्भ है। लगभग १६७३ ई० में चेन्नगण ने यह मन्दिर बनवाया था।

इसके आगे ऊँचे चबूतरे पर बना हुआ 'ओदेगल बसती' नामक मन्दिर है। यह होयसल-काल का कड़े कंकड़ का बना हुआ मन्दिर है। इस मंदिर की छत के मध्य भाग में एक बहुत ही सुन्दर कमल लटका हुआ हैं। श्री आदिनाथ भगवान की जिन प्रतिमा दर्शनीय हैं। श्री शान्तिनाथ और नेमिनाथ की भी प्रतिमायें हैं।

इस विंध्यगिरि पर्वत पर ही एक छोटे घेरे में श्री बाहुबलि (गोम्मट) स्वामी की विशालकाय मूर्ति विराजमान है। इस घेरे के बाहर भव्य संगतराशी का त्यागद 'ब्रह्मदेव स्तम्भ' नामक सुन्दर स्तम्भ छत से अधर लटका हुआ है। इसे गंगवंश के राज-मन्त्री सेनापति चामुण्डराय ने बनयाया था, जो श्री 'गोमटसार' के रचयिता श्री नेमिचंद्राचार्य के शिष्य थे। गुरु और शिष्य की मूर्तियां भी उस पर अंकित है। इस स्तम्भ के सामने ही गोम्मटेश मूर्ति के प्राकार में घुसने का अखण्ड द्वार हैं—वह एक शिला का बना हुआ है। इस द्वार के दाहिनी ओर बाहुबलि जी का छोटा सा मंदिर और ब.ई ओर उनके बड़े भाई भरत भगवान का मन्दिर हैं। पास वाली चट्टान पर सिद्ध भगवान की मूर्तियां हैं और वहीं 'सिद्धर-बस्ती' हैं, जिनके पास दो सुन्दर स्तम्भ हैं। वहीं पर 'ब्रह्मदेव-स्तम्भ' है और गुल्लकायि जी की मूर्ति है। चामुण्डराय के समय में गुल्लकायि जी धर्मवत्सला महिला थी। लोकश्रुति है कि चामुण्डराय ने बड़े सजधज से गोम्मट स्वामी के अभिषेक की तैयारी की, परन्तु अभिषिक्त दूध जाँघों के नीचे नहीं उतरा,

क्योंकि चामुण्डराय जी को थोड़ा सा अभिमान हो गया था। एक वृद्धा भक्तिन गोल्लकायि नारियल में दूध भर कर लाई और भक्ति पूर्वक अभिषेक किया तो वह सर्वाङ्ग सम्पन्न हुआ। चामुण्डराय जी ने उसकी भक्ति चिरस्थायी बना दी।

श्री बाहुबलि जी श्री तीर्थङ्कर ऋषभ जी के पुत्र और भरत चक्रवर्ती के भाई थे। राज्य के लिए दोनों भाईयों में युद्ध हुआ था। बाहुबलि की विजय हुई। परन्तु उन्होंने राज्य अपने बड़े भाई को दे दिया और स्वयं तप कर सिद्धपरमात्मा हुए। भरत जी ने कोदनपुर में उनकी बृहत्काय मूर्ति स्थापित की, परन्तु कालान्तर में उसके चहुँओर इतने कुक्कुट सर्प हो गये कि दर्शन करने दुर्लभ थे। गंगराजा राचमल्ल के सेनापति चामुण्डराय अपनी माता की इच्छानुसार उनकी वन्दना करने के लिए चले, परन्तु उनकी यात्रा अधूरी रही। इसलिए उन्होंने श्रवणबेलगोल में ही एक वैसी ही मूर्ति स्थापित करना निश्चित किया। उन्होंने चन्द्रगिरि पर्वत पर खड़े होकर एक सोने का तीर मारा जो इन्द्रगिरि पहाड़ पर किसी चट्टान में जा लगा। इस चट्टान में उनको गोम्मटेश्वर के दर्शन हुए। चामुण्डराय जी ने श्री नेमिचद्राचार्य की देख रेख में यह महान मूर्ति सन् ९८३ ई० के लगभग बनवाई थी। यह उत्तराभिमुखी है और हल्के भूरे रंग के महीन कंकरीले पत्थर (Granite) को काटकर बनाई गई है। यह विशाल मूर्ति इतनी स्वच्छ और सजीव है कि मानो शिल्पी अभी ही उसे बनाकर हटा है। इस स्थान के अत्यन्त सुन्दर और मूर्ति के बड़ा होने के ख्याल से गोम्मटेश्वर की यह महान् मूर्ति मिश्र देश के रंमसेस राजाओं की मूर्तियों से भी बढ़कर अद्भुत एवं आश्चर्यजनक सिद्ध होती है। इतना महान् अखण्ड शिलाविग्रह संसार में अन्यत्र नहीं हैं। निस्सन्देह त्याग और वैराग्य मूर्तिके मुख पर सुन्दर नृत्य

कर रहा है—उसकी शान्तिमुद्रा भुवन मोहिनी है ! उस शिल्पी को धन्य है जिसने शिल्पकला के परमोत्कर्ष का ऐसा सफल और सुन्दर नमूना जनता के समक्ष रक्खा है।

बाहुबलि जी प्रथम कामदेव थे। कहते हैं कि 'गोम्मट' शब्द उसी शब्द का द्योतक है। इसीलिये वह गोम्मटेश्वर कहलाते हैं। उनका अभिषेकोत्सव १२ वर्षों में एक बार होता है। इस मूर्ति के चहुँ ओर प्राकार में छोटी-छोटी देवकुलिकायें हैं, जिनमें तीर्थङ्कर भ० की मूर्तियां विराजमान हैं।

चंद्रगिरि पर्वत इन्द्रगिरि से छोटा है, इसीलिए कनड़ी में उसे चिक्कवेट्ट कहते हैं। वह आसपास के मैदान से १७५ फीट ऊँचा है। संस्कृत भाषा के प्राचीन लेखों में इसे 'कटवप्र' कहा है। इस प्राकार के भीतर यहाँ पर कई सुन्दर जिन मंदिर हैं। एक देवालय प्राकार के बाहर है। प्राय: सब ही मंदिर द्राविड़-शिल्पकला की शैली के बने हैं। सबसे प्राचीन मंदिर आठवीं शताब्दी का बताया जाता है। पहले ही पर्वत पर चढ़ते हुए भद्रबाहुस्वामी की गुफा मिलती हैं, जिसमें उनमें उनके चरणचिन्ह विद्यमान हैं। भद्रबाहु-गुफा से ऊपर पहाड़ की चोटी पर भी मुनियों के चरणचिन्ह हैं। उनकी वंदना करके यात्री दक्षिणद्वार से प्राकार में प्रवेश करता है। घुमते ही उसे एक सुन्दरकाय मानस्तम्भ मिलता है, जिसे 'कूगेब्रह्मदेव' स्तम्भ कहते हैं। यह यह बहुत ऊँचा है और इसके सिरे पर ब्रह्मदेव की मूर्ति है। गंगवंशी राजा मारसिंह द्वितीय का स्मारकरूप एक लेख भी इस पर खुदा हुआ हैं। इसी स्तम्भ के पास कई प्राचीन शिलालेख चट्टान पर खुदे हुये हैं। नं० ३१ वाला शिलालेख करीब ६५०ई० का है और स्पष्ट बताता है कि 'भद्रबाहु और चन्द्रगुप्त दो महान मुनि हुये जिनकी कृपादृष्टि से जैनमत उन्नत दशा को प्राप्त हुआ।'

उपर्युक्त मानस्तम्भ से पश्चिम की ओर सोलहवें तीर्थङ्कर श्री शान्तिनाथ का एक छोटा मन्दिर है। उसमें एक महामनोज्ञ ग्यारह फीट ऊँची शान्तिनाथ भगवान् की खड्गासन मूर्ति दर्शनीय है। उनकी साभिषेक पूजा करके हमें अपूर्व शांति और आत्माह्लाद प्राप्त हुआ था। इस मन्दिर के उत्तर में खुली जगह में भरत की अपूर्ण मूर्ति खड़ी है। पूर्व दिशा में 'महानवमी मंडप' है, जिनके स्तम्भ दर्शनीय हैं। एक स्तम्भ पर मंत्री नागदेव ने सन् ११७६ ई० नयकीर्ति नामक मुनिराज की स्मृति में लेख खुदवाया है। यहां से पूर्व की ओर श्री पार्श्वनाथ जी का बहुत बड़ा मन्दिर है। इसके सामने एक मानस्तम्भ है। मन्दिर उत्कृष्ट शिल्पकला का सुन्दर नमूना है। इसी के पास सबसे बड़ा और विशाल मन्दिर 'कत्तले-बस्ती' नामक मौजूद है। इसे विष्णुबर्द्धन के सेनापति गंगराज ने बनवाया था। इसमें आदिनाथ की मूर्ति विराजमान है। यहां यहीं एक मंदिर है जिसमें प्रदक्षिणार्थ मार्ग बना हुआ है।

चन्द्रगिरि पर्वत पर सबसे छोटा मंदिर 'चन्द्रगुप्त-बस्ती' है, जिसकी एक पत्थर की सुन्दर चौखटे में पांच चित्रपट्टिकायें दर्शनीय हैं। इनमें श्रुतकेवली भद्रबाहु और सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्यके जीवन सम्बन्धी चित्र बने हुए हैं। पार्श्वनाथ स्वामी की मूर्ति बिराजमान है। दीवारों पर भी चित्र बने हुए हैं। श्री भदबाहु और चन्दगुप्त का यह सुन्दर स्मारक है।

फिर 'शासन बस्ती' के दर्शन करना चाहिए, जिसमें एक शिलालेख दूर से दिखाई पड़ता है। भ० आदिनाथ की मूर्ति विराजमान है। इस मन्दिर को सन् ११५७ में सेनापति गंगराज ने बनवाया था और इसका नाम 'इन्द्रकुलगृह' रखा था।

वही 'मज्जिगण्ण-बस्ती' में भी एक छोटा मन्दिर है, जिसमें चौदहवें तीर्थङ्कर श्री अनन्तनाथ की पाषाण मूर्ति विराजमान है। दीवारों पर सुन्दर फूल बने हुए हैं।

'चन्द्रप्रभवस्ती' के खुले गर्भगृह में आठवें तीर्थङ्कर श्री चन्द्र-प्रभु की मनोज्ञ मूर्ति विद्यमान है। इसे गंगवंशी राजा शिवमार ने बनवाया था।

'सुपार्श्वनाथ बस्ती' में भ० सुपार्श्वनाथ की पद्मासन प्रतिमा विराजमान है।

'चामुँडरायबस्ती' पहाड़ के सबसे बड़े मन्दिरों में से है। इसमें २२ वे तीर्थङ्कर श्री नेमिनाथ जी की प्रतिमा दर्शनीय है।

इस रमणीक मन्दिर को सेनापति चामुँडराय ने ६८२ ई० में बनवाया था। बाहरी दीवारों में खम्भे खुदे हुए हैं जिनमें मनोहर चित्रपट्टिकायें बनी हैं। छत की मुडेलों और शिखरों पर मनोहर शिल्पकार्य बना है। ऊपर छत पर चामुँडराय जी के सुपुत्र जिनदेव ने एक अट्टालिका बनवाई और उसमें पार्श्वनाथ जी का प्रतिबिम्ब विराजमान कराया था। नीचे गांव में पास में ही 'आदिनाथ देवालय' है, जिसे 'एरडुकट्टे बस्ती' कहते हैं। इसे होयसल-सेनापति गंगराज की धर्मपत्नी श्रीमती लक्ष्मीदेवी ने सन् १११८ ई० बनवाया था।

'सवतिगंधवारण' बस्ती भी काफी बड़ा मन्दिर है। इसे होयसल नरेश विष्णुवर्द्धन की रानी शांतलदेवीने बनवाया था और इसमें भगवान् शान्तिनाथ की प्रतिमा विराजमान की थी। इस मूर्ति का प्रभामंडल अतीव सुन्दर है।

'बाहुबलिबस्ती' रथाकार होने के कारण 'तेरिनबस्ती' कहलाती है, क्योंकि कन्नड़ में रथ को तेरु कहते हैं। इसमें श्री बाहुबलि जी की मूर्ति विराजमान है।

"शांतीश्वरबस्ती" मंदिर भी होयसल काल का है। 'इरुवे-ब्रह्मदेव मन्दिर' में केवल ब्रह्मदेव की मूर्ति है यहां दो कुण्ड भी है।

इस पर्वत के उत्तर द्वार से उतरने पर जिननाथपुर का पूर्ण दृश्य दिखाई पड़ता है। जिननाथपुर को होयसल सेनापति गंगराज ने सन् १११७ ई० में बसाया था। सेनापति रेचिमय्या ने यहां पर एक अतीव सुन्दर 'शान्तिनाथबस्ती' नामक मन्दिर बनवाया था। यह मन्दिर होयसल शिल्पकारी का अद्वितीय नमूना है। इसके नक्काशीदार स्तम्भों में मणियों की पच्चीकारी का काम दर्शनीय है। स्तम्भ भी कसौटी के पत्थर के हैं। इसके दर्शन करके हृदय आनन्द विभोर होता है और मस्तक गौरव से स्वयमेव ऊंचा उठता हैं। जैनधर्म का सजीव प्रभाव यहाँ देखने को मिलता है।

इसी गांव में दूसरे छोर पर तालाब के किनारे 'अोगलबस्ती नामक मन्दिर हैं, जिसकी प्राचीन प्रतिमा खण्डित हुई तालाब में पड़ी है। नई प्रतिमा विराजमान की गई हैं।

इसके अतिरिक्त श्रवणबेलगोल गांवमें भी कई दर्शनीय जिन मंदिर हैं। गांव भर में 'भण्डारी-बस्ती' नामक मन्दिर सबसे बड़ा है। इसके कई गर्भ गृह में एक लम्बे अलंकृत पादपीठ पर चौबीस तीर्थंकरों की खड्गासन प्रतिमायें विराजमान हैं। इसके द्वार सुन्दर हैं। फर्श बड़ी लम्बी २ शिलाओं का बना हुआ है। मन्दिर के सामने एक अखण्ड शिला का बड़ा सा मानस्तम्भ खड़ा है। होयसल नरेश नरसिंह प्रथम के भण्डारी ने यह मन्दिर बनवाया था। राजा नरसिंह ने इस मन्दिर को सवणेरु गांव भेंट किया था और इसका नाम भव्यचूड़ामणि' रखा था।

'अक्कनबस्ती' नामक मन्दिर श्रवणबेलगोलमें होयसल शिल्प शैली का एक ही मंदिर है। इसमें सप्तफणमंडित भ० पार्श्वनाथ की प्रतिमा विराजमान हैं। इसके स्तम्भ-छत और दीवारें शिल्प-कला के अपूर्व नमूने हैं। इस मन्दिर को ब्राह्मण सचिव चन्द्रमौलिकी पत्नी अचियवकदेवी ने सन् ११८१ ई० में बनवाया था। वह स्वयं जैनधर्मभक्त थीं। उनका अंतर्जातीय विवाह हुआ था।

इस मन्दिर के प्राकार के पश्चिमी भाग में 'सिद्धान्तवस्ती' नामक मन्दिर है, जिसमें पहले सिद्धान्त ग्रन्थ रहते थे। बाहर द्वार के पास 'दानशाले वस्ती' है, जिसमें पंचपरमेष्ठी की मूर्ति विराजित हैं।

'नगर जिनालय' बहुत छोटा मन्दिर है, जिसे मंत्री नागदेव ने सन् ११९५ ई० में बनवाया था।

'मंगाई वस्ती' शाँतिनाथ स्वामी का मंदिर है। चारुकीर्ति पंडिताचार्य की शिष्या, राजमंदिर की नर्तकी-चूड़ामणि और बेलुगुलु की रहने वाली मंगाई देवी ने यह मंदिर १३२५ ई० में बनवाया था। धन्य था वह समय जब जैन धर्म राजनर्तकियों के जीवन को पवित्र बना देता था।

'जैनमठ' श्री भट्टारक चारुकीर्ति जी का निवास स्थान है। इसके द्वार मण्डप के स्तम्भों पर कौशल-पूर्ण खुदाई का काम है। मन्दिर में तीन गर्भगृह हैं जिनमें अनेक जिनबिम्ब विराजमान हैं। इसमें 'नवदेवता' की मूर्ति अनूठी है। पंचपरमेष्टियों के अतिरिक्त इसमें जैन धर्म को एक वृक्ष के द्वारा सूचित किया है, व्यास पीठ (चौकी) जिनवाणी का प्रतीक है, चैत्य एक जिनमूर्ति द्वारा और जिन मंदिर एक देवमण्डप द्वारा दर्शाये गये है। सबकी दीवारों पर सुन्दर चित्र बने हुये हैं। पास में ही जैन पाठशाला बालक-बालिकाओं के लिए अलग-अलग हैं। इस तीर्थ की मान्यता मैसूर के विगत शासनाधिकारी राजवंश में पुरातन काल से हैं। मस्तकाभिषेक के समय सबसे पहले श्रीमान् महाराजा सा० मैसूर ही कलशाभिषेक करते हैं। जैनधर्म का गौरव श्रवणबेलगोल के प्रत्येक कीर्ति स्थान से प्रकट होता है। प्रत्येक जैनी को यहां के दर्शन करना चाहिए। यहां से लारी वालों से किराया तै कर इस ओर के अन्य तीर्थों की यात्रा करनी चाहिए, मार्ग में मैसूर से रंगापट्टम, वैणूर आदि स्थानों को दिखलाते हुए ले जाते हैं।

मैसूर

मैसूर पुराना शहर है और यहां कई स्थान हैं। यहां चन्दन की अगरबत्ती तेल आदि चीजें अच्छी वनती हैं। यहाँ से १० मील दूर वृन्दावन गार्डन अवश्य देखना चाहिए। यहां जैन बोर्डिंग हाऊस की धर्मशाला में ठहरना चाहिए। वहीं एक जिनमंदिर है। दूसरा जिन मन्दिर म्यूनिसिपल-आफिस के पास है। यहाँ से 'गोम्मटगिरि' के दर्शन करना चाहिए। यहां से चलने पर मार्ग में सेरंगापट्टम में हिन्दू-मंदिर और टीपू सुल्तान का मकबरा अच्छी इमारत है। आगे हासन होते हुये बेलूर पहुंचते हैं। यहां के केशव मंदिर में कई जिन मूर्तियां रक्खी हुई हैं। वहां से हलेविड होता जावें।

हलेविड (द्वारा समुद्र)

हलेविड प्राचीन नाम द्वारा समुद्र है। यह पूर्वकाल में होसयल वंश के राजाओं की राजधानी थी। राजमंत्री हल्ल और गँगराज ने यहाँ कई मंदिर निर्माण कराये थे। 'विजयपार्श्वनाथ' बस्ती नामक मन्दिर को विष्णुवर्द्धन नरेश ने दान दिया था और भगवान पार्श्वनाथ के दर्शन करके उनका नाम 'विजयपार्श्व' रक्खा था। इस मन्दिर को उनके सेनापति गंगराज ने बनवाया था। इस मन्दिर में भगवान पार्श्वनाथ की खड्गासन प्रतिमा १४ हाथ की अत्यन्त मनोहर है। जिस समय प्रतिमा की प्रतिष्ठा हुई थी उस समय राजा विष्णुवर्द्धन के एक पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ था और उन्हें संग्राम में विजय लक्ष्मी प्राप्त हुई थी। इसलिए उन्होंने इस प्रतिमा का नाम 'विजयपार्श्वनाथ' रक्खा था। इस मन्दिर में कसौटी-पाषाण के अद्भूत स्तम्भ हैं, जिनमें से आगे दो स्तम्भों को पानी से गीला करके देखने से मनुष्य की उल्टी और फैली हुई छाया दिखती है। इसके अतिरिक्त (१) श्री आदिनाथ (२) शाँतिनाथ जी के भी दर्शनीय मन्दिर हैं। एक

समय यहां पर ७२० जैन मंदिर थे, परन्तु लिंगायतों ने उन्हे नष्ट कर दिया। वर्तमान मन्दिरों के अहाते में अगणित पाषाण भग्नावशेष पड़े हुए पुरातन जैन गौरव की याद दिलाते हैं। यहां से सीधा वेणूर व मूड़बद्री जाना चाहिए। मार्ग अत्यन्त मनोरम है। पहाड़ों के दृश्य उपत्यकाओं की हरियाली और झरनों के कलकलनाद मन को मोह लेते हैं। गांवों में भी जिन मंदिर हैं। रास्ता बड़ा टेड़ा-मेढ़ा है—संसार भ्रमण का मानचित्र ही मानो हो। हलेविड से वेणूर लगभग ६० मील दूर है।

वेणूर

वेणूर जैनियों का प्राचीन केन्द्र है। यहां एक समय अजिलवंश के जैनी राजाओं का राज्य था। उनमें से वीर निम्मराज ने शाके १५२६ (सन् १६०४ ई०) में यहां पर बाहुबलि स्वामी की एक ३७ फीट ऊँची खड्गासन प्रतिमा प्रतिष्ठित कराई और 'शाँतिनाथ स्वामी' का मंदिर निर्माण कराया था। मूर्ति ग्राम से सटी हुई परायुनी नदी के किनारे बने हुए प्राकार में खड़ी हुई अपनी अनूठी शान्ति बिखेर रही है। प्राकार में घुसते ही दो मंदिर हैं। इनके पीछे एक बड़ा पार्श्वनाथ का मंदिर अलग हैं, जिसमें हजारों मनोहर प्रतिमायें विराजमान हैं। इनके अतिरिक्त यहां चार मंदिर और हैं। यहाँ से मूड़बद्री जावे।

श्री मूड़विदुरे (मूड़बद्री) अतिशय क्षेत्र

वेणूर से मूड़बद्री सिर्फ १२ मील है। रास्ते के गांव में भी जिन मन्दिर है। यहां से मैदान में चलना पड़ता है। पहाड़ का उतराव-चढ़ाव वेणूर में खतम हो जाता है। चन्दन, काजू, सुपारी नारियल आदि के पेड़ों से भरे हुए बहुत मिलते हैं, यहां जैन धर्मशाला सुन्दर बनी हुई हैं, उसमें ठहरना चाहिए। प्राचीन होयसल काल में मूड़बद्री जैनियों का प्रमुख केन्द था। यहां के

चौटरवंशी राजा जैन धर्म के अनन्य भक्त थे। बड़े २ धनवान जैन व्यापारी यहां रहते थे। राजा और प्रजा सब ही जैनधर्म के उपासक थे। सन् १४४२ ई० में ईरान के व्यापारी अब्दूलरज्जाक ने मूड़बद्री के चन्द्रनाथ स्वामी के मंदिर को देखकर लिखा था। कि 'दुनियां में उसकी शान का दूसरा मंदिर नही है।' (...**has not its equal in the universe**) उसने मदिर को पीतल का ढला हुआ और प्रतिमा सोने की बनी बताई थी। आज भी कुछ लोग प्रतिमा सुवर्ण की बतलाते हैं, परन्तु वास्तव में वह पाँच धातुओं की है, जिसमें सोने और चांदी के अंश अधिक हैं। यह प्रतिमा अत्यन्त मनोहर लगभग ५ गज ऊँची है। यह मंदिर सन् १४२९-३० में लगभग ८-९ करोड़ रुपये की लागत से बनवाया था। इस मंदिर को ठीक ही त्रिभुवन-तिलक चूड़ामणि कहते हैं। यहां यहीं सबसे अच्छा मंदिर है। वह चार खनों में बटा हुआ है। दूसरे खन में 'सहस्त्रकूट चैत्यालय' है। उसमें १००८ साँचे में ढली हुई प्रतिमायें अतीव मनोहर हैं। इस मंदिर के अतिरिक्त यहाँ १८ मंदिर और हैं, जिनमें 'गुरु बस्ती' और 'सिद्धान्तबस्ती' उल्लेखनीय है। सिद्धान्तबस्ती में 'षटखंडाकूमसूत्रादि' सिद्धांत ग्रन्थ और हीरा-पन्ना आदि नव रत्नो की ३५ मूर्तियां विराजमान है। गुरुबस्ती में मूलनायक की प्रतिमा आठ गज ऊंची श्रीपार्श्वनाथ भगवान् की है। पंचों की आज्ञा से और भण्डार में कुछ देने पर इन अद्‌भुत प्रतिमाओं के और सिद्धांत ग्रन्थों के दर्शन होते हैं। अन्य मंदिरों में भी मनोज्ञ प्रतिमायें विराजमान हैं। सात मंदिरों के सामने मानस्तम्भ बने हुये हैं। इन सब मंदिरों का प्रबंध यहां के भट्टारक श्री ललितकीर्ति जी के तत्वावधान में पंचों के सहयोग से होता है। शाम को रोशनी और आरती होती है। यहां पर श्री पं० लोकनाथ जी शास्त्री ने वीरवाणी विलास सिद्धांत भवन में ताड़पत्रों पर लिखे हुए जैन शास्त्रों का

अच्छा संग्रह किया है यह स्थान मनोहर है। राजाओं के महलों के भग्नावशेष हैं। यहां से १० मील दूर कारकल जाना चाहिये।

कारकल अतिशयक्षेत्र

इस क्षेत्र का प्रबंध यहाँ के भट्टारकजी के हाथ में है। उन्ही के मठ में ठहरने की व्यवस्था है। यहां १० मंदिर प्राचीन और मनोज्ञ लाखों रुपये की कीमत के बने हुए है। पूर्व की ओर एक छोटी-सी पहाड़ी एक फर्लांग ऊपर चढ़ने पर बाहुबलि स्वामी की विशालकाय प्रतिमा के दर्शन करके मन प्रसन्न हो जाता है। यह प्रतिमा करीब ४२ फीट ऊंची है। वहीं पर २० गज ऊंचा एक सुन्दर मान स्तम्भ अद्‌भूत कारीगरी का दर्शनीय है। इस मूर्ति को १४३२ में कारकल नरेश वीर-पाण्डव ने निर्माण कराया था। यहाँ भैरव ओडेयर बंश के सब ही राजा प्रायः जैनी थे। सान्तार बंश के महाराजाधिराज लोकनाथरस के शासनकाल में सन् १३३४ में कुमुदचन्द्र भट्टारक के बनवाये हुये शाँतिनाथ मंदिर को उनकी बहनों और राज्यधिकारियों ने दान दिया था। शक सं० १५०८ में इम्मडिभैरवराज ने वहाँ से सामान छोटी पहाड़ी पर 'चतुर्मुख बस्ती' नामक विशाल मंदिर बनवाया था। इस मंदिर के चारों दिशाओं में दरवाजे है। और चारो ओर १२ प्रतिमायें सात-सात गज की अत्यन्त मनोज्ञ विराजमान हैं। यहां से पश्चिम-दिशा की ओर ११ विशाल मंदिर अनूठे बने हुये हैं। यहाँ कुल २३ जैन मंदिर हैं। कारकल से ३४ मील की दूरी पर वारंग ग्राम है।

वारंग-क्षेत्र

वारंग क्षेत्र हरी-भरी उपत्यका के बीच में स्थित मनोहर दिखता है। यहाँ कुल ३ जैन मंदिर है। नेमीश्वर-बस्ती नामक मंदिर कोट भीतर दर्शनीय हैं। इस मन्दिर में इस क्षेत्र सम्बन्धी 'स्थलपुराण' और माहात्म्य सूरक्षित था। अब वह वारंग मठ के

स्वामी भट्टारक देवेन्द्रकीर्ति जी के पास बताया जाता है, जो होंम्बुच मठ में रहते हैं। उन्हें इस क्षेत्र का माहातम्य प्रकट करना चाहिए। मन्दिर के सामने मानस्तम्भ भी है। विजयनगर के सम्राट देवराय ने इस मन्दिर के दर्शन किये थे और दान दिया था। इसी के पास तालाब में एक 'जलमन्दिर' है, जिसके दर्शन करने के लिए छोटी-छोटी किश्तियों में बैठ कर जाया जाता है। मन्दिर के बीच में एक चौमुखी प्रतिमा अतिशयवान विराजमान है। संभव है कि इस क्षेत्र का सम्बन्ध नेमिनाथ स्वामी के तीर्थ में जन्मे हुए वरांग कुमार से हो। यहां से वापस मूड़बद्री होते हुये हासन स्टेशन से हुबली जाना चाहिये।

अर्प्पाकम् (काँजीवरम्)

मद्रास से कांजीवरम् जब जाये तब अर्प्पाकम क्षेत्र और कांजीवरम्के भी दर्शन करे। अर्प्पाकम काँजीवरम् स्टेशनसे ६ मील दक्षिण में है। यहां पर एक प्राचीन छोटा सा मन्दिर अनूठी कारीगरी का दर्शनीय है, जिसमें आदिनाथ स्वामी की प्रतिमा विराजमान है। वापस कांजीवरम् जावे वहाँ कोई मन्दिर नहीं है, परन्तु तिरुपथीकुनरम् में 'वेयावती' नदी के किनारे दो दि० जैन मन्दिर अनूठी कारीगरी के हैं। दर्शन करके तिण्डिवनम् रेल स्टेशन का टिकट लेकर वहाँ जावे। यद्यपि यहाँ जैनियों के पाँच गृह हैं, परन्तु जिन मन्दिर नहीं है—एक बगीचे में जिन प्रतिमा है। काँजीवरम् बहुत प्राचीन शहर है और उसका सम्बन्ध जैनों, बौद्धों और हिन्दुओं से है।

पेरुमण्डूर

पेरुमण्डूर तिण्डिवनम् से ४ मील दूर है, जहाँ दि० जैनियों की बस्ती काफी है। ग्राम में दो जिन मन्दिर हैं और सहस्राधिक जिन मूर्तियां हैं। जब मैलापुर समुद्र में डूबने लगा, तब वहाँ की

मूर्तियाँ लाई जाकर यहाँ विराजमान की गई थी। दो सौ वर्ष पूर्व संधि महामुनि और पण्डित महामुनि ने ब्राह्मण से वाद करके जैनधर्म की प्रभावना की थी। तभी से यह दि० जैनियों का विद्यापीठ है—एक दि० जैन पाठशाला यहाँ बहुत दिनों से चलती है।

श्री क्षेत्र पोन्नूर

पोन्नूर क्षेत्र तिण्डिवनम् से करीब २५ मील दूर एक पहाड़ की तलहटी में है। वहां पर पहले सकल लोकाचार्य वर्द्धन राजनारायण शम्भूवरायर नामक जैनी राजा शासन करते थे। शक सं० १२६८ में पहाड़ पर उसी राजा के राज्यकाल में एक विशाल मंदिर बनवाया गया था, जिसमें श्री पार्श्वनाथ जी की प्रतिमा विराजमान की गई थी। पहाड़ पर श्री एलाचार्य जी भ० की चरण-पादुकायें हैं। यह 'तिरुकुरुल' नामकतामिलग्रन्थके रचयिता बताये जाते हैं। अतः यह स्थान भगवान् कुन्दकुन्दस्वामी की तपोभूमि है, क्योंकि उनका अपरनाम एलाचार्य था। उनकी स्मृति में प्रति रविवार को पहाड़ पर यात्रा होती है, जिसमें करीब ५०० आदमी शामिल होते हैं। यहां का प्रबन्ध पोन्नूर के दि० जैन पंच करते हैं। उन्हें इस मेले में धर्म प्रचार का प्रबन्ध करना चाहिये। पोन्नूर में एक जैन मंदिर, धर्मशाला और पाठशाला भी है। यहां का जलवायु अच्छा है। वापिस तिण्डिवनम् आवे। वहां से चित्तम्बूर १० मील वायव्यकोण में जावे।

श्री क्षेत्र सितामूर (चित्तम्बूर)

चित्तम्बूर प्राचीन जैन स्थान है। अब भी वहां दो दि० जैन मंदिर अति मनोज्ञ और शोभनीक हैं, जिनमें से एक १५०० वर्षों का प्राचीन हैं। श्री संधि महामुनि और पंडित महामुनि ने यहां आकर यह मन्दिर बनवाया और मठ स्थापित किया था। आज-

कल वहां श्री लक्ष्मीसेन भट्टारक विद्यमान बताये जाते है। चैत मास में रथोत्सव होता है। विल्कम् ग्राम में भी दर्शनीय मन्दिर हैं। यहां से वापिस तिण्डिवनम् जावे और वहां से पुण्डी के दर्शन करना हो तो अर्नीस्टेशन (दक्षिण रेलवे) जावे।

पुण्डी

पुण्डी जिला उत्तर अर्काट में अर्नीस्टेशन से करीब तीन मील है। वहाँ पाषाण का एक विशाल और प्राचीन मंदिर है। उसमें १६ स्तम्भों का मण्डप शिल्पकारी का अच्छा नमूना है। भ० पार्श्वनाथजी की व श्रीऋषभदेवजी की मनोज्ञ प्रतिमायें विराजमान हैं। इस मंदिर की कथा ताड़पत्र पर लिखी रक्खी है, जिससे प्रगट है कि यहां दो शिकारियों को जमीन खोदते हुए श्री ऋषभदेव की प्रतिमा मिली थी जिसे वे पूजने लगे। भाग्यवशात् एक मुनिराज वहाँ से निकले, जिन्होंने उस प्रतिमा के दर्शन किये। उन्होने वहाँ के राजा की पुत्री की भूतबाधा दूर करके उसे जैनधर्म में दीक्षित किया और उससे मन्दिर बनवाया। मंदिरों के जीर्णोद्धार की आवश्यकता है।

श्री क्षेत्र मनारगुडी

श्री मनारगुडी क्षेत्र जिला तंजौर में निडबंगलम् दक्षिण रेलवे स्टेशन से ६ मील दूर है। यह स्थान श्री जीवंधर स्वामी का जन्मस्थान बताया है। कहते हैं कि यहाँ दो सौ वर्ष पहले एक मुनि जी पर्णकुटिका में तपस्या करते थे। उसी में उन्होंने श्री पार्श्वनाथ जी की प्रतिमा विराजमान की थी। जब यह बात कुभकोनम् के जैनियों को ज्ञात हुई तो उन्होंने यहाँ आकर मन्दिर बनवा दिया। तब से यहाँ बराबर वैशाख मास के शुक्लपक्ष में यात्रोत्सव १० दिन तक होता है। मंदिर में श्री मल्लिनाथ स्वामी की प्रतिमा विराजमान है। इनके अतिरिक्त हुम्बुच पद्मावती,

धर्मस्थल, आदि स्थान भी दर्शनीय हैं। इन स्थानों के दर्शन करके हुबली आजावे।

हुबली-आरटाल

हुबली जंकशन के पास ही धर्मशाला में जिनमंदिर है, वहाँ दर्शन करे। शहर में भी पाँच मंदिर दर्शनीय हैं। चाँदी की बनी चौबीस तीर्थङ्करों की प्रतिमायें मनोज्ञ हैं। किला मुहल्ले का मन्दिर प्राचीन हैं। हुबली से २४ मील नेऋत्य कोन में आरटाल क्षेत्र है। घोड़ागाड़ी जाती है। पाषाण का विशाल मन्दिर दर्शनीय है, जिसमें पार्श्वनाथ जी की वृहदाकार कायोत्सर्ग प्रतिमा विराजमान है। इस मन्दिरका चलुक्य काल में मुनि कनकचन्द्र के उपदेशसे बोम्भसेट्टि ने निर्माण कराया था। वहाँ से वापस हुबली आवे। हुबली से शोलापुर जावे, जहाँ पाँच दि० जैन मन्दिर और बोर्डिग हाउस एवं श्राविकाश्रम आदि संस्थायों के दर्शन करके लारी में कुन्थलगिरि के दर्शन करने जावे।

कुन्थलगिरि

कुन्थलगिरि पर्वत से श्री कुलभूषण और देशभूषण मुनि मोक्ष गये है। पर्वत छोटा-सा अत्यन्त रमणीक है। उसकी चोटी तथा मध्य में मुनियों के चरण मंदिर सहित दस मंदिर बने हैं। प्रकृतिसौन्दर्य अपूर्व हैं। अगस्त मास में मेला होता है। संवत् १९३२ में यहाँ के मन्दिरों का जीर्णोद्धार सेठ हरिभाई देवकरण जी ने ईडर के भट्टारक कनककीर्ति जी से कराया था। यहाँ पर आचार्य शान्ति सागर जी महाराजने १४ अगस्त सन् १९५५ को सल्लेखना धारण की थी और ३६ दिन के उपवास के बाद १८ सितम्बर को उनका समाधिमरण हुआ। इस घटना ने क्षेत्र की ख्याति को और अधिक बढ़ा दिया। यहाँ पर ब्रह्मचर्याश्रम दर्शनीय है। वहाँ से वापस शोलापुर आवें।

बादामी-गुफामन्दिर

स्टेशन से बादामी गाँव १।। मील है। दक्षिण वाली पहाड़ी पर ३ हिन्दू मंदिरों के अतिरिक्त दि० जैनियों का गुफामंदिर (नं०४) हैं। यह गुफामन्दिर सबसे ऊँचा हैं और इसमें चार दालान है। पहले दालानमें जिनेन्द्रदेव की एक पद्मासन मूर्ति सिंहासनाधिष्ठित हैं। दूसरे दालान में चौबीसी प्रतिमा और पार्श्वनाथ जी की एक मुख्य मूर्ति और ८ बड़ी मूर्तियां हैं। इस दालान के सामने मेहराव दार स्तम्भ है जिन पर मूर्तियां अंकित हैं। तीसरे दालान में श्री बाहुबलिस्वामी की करीब ७ फीट ऊँची प्रतिमा दर्शनीय है। उसी के सम्मुख श्री पार्श्वनाथ स्वामी की प्रतिमा ७ फीट ऊँची कायोत्सर्ग विराजमान है। चौथी दालान में चौबीसी तथा सैकड़ों मूर्तियां हैं। मलप्रभा नदी के किनारे प्राचीन काल में कई जिन मन्दिर बने हुए थे। जिनके भग्नावशेष अब भी मौजूद है। बादामी पश्चिमी चालुक्य राजाओं की राजधानी थी, जिनमें से कई राजा जैनी थे। उन्होंने ही यह जिन मन्दिर बनवाये थे। यहाँ से मनमाड़ ज० जावे। इस मार्ग में बीजापुर भी पड़ता हैं।

बीजापुर

बीजापुर एक प्राचीन स्थान है, जहां पर दि० जैनियों के चार मन्दिर हैं। मुसलमान राजाओं ने यहाँ के कई जिन मन्दिरों, मूर्तियों को तुड़बा कर चन्दा बावड़ी में फेंक दिया था। किले में मिली हुई जिनमूर्तियाँ 'बोलीगुम्बज' के संग्रहालय में रक्खी हुई हैं। यह गुम्वज बहुत बड़ा है और अद्भुत है। इसे मुहम्मद आदिलशाह ने बनवाया था। इसमें शब्द की प्रतिध्वनि आश्चर्य-जनक होती है। इसलिए इसका सार्थक नाम 'बोलीगुम्बज' (Dome of Speech) है। बीजापुर से दो मील दूर जमीन में गड़ा हुआ अति प्राचीन कला कौशल युक्त श्री पार्श्वनाथ जी का

दर्शनीय मंदिर मिला है। यह प्रतिमा १०८ सर्पफण मंडित पद्मासन है।

कोल्हापुर और बेलगांव

यदि इस ओर के प्रमुख स्थानों को देखना इष्ट हो, तो कोल्हापुर और बेलगाम भी होता आवे। कोल्हापुर का प्राचीन नाम क्षुल्लकपुर हैं। यह शिलाहार वंश के राजाओं की राजधानी था, जिनमें कई राजा जैनधर्म के भक्त थे। राजा गण्डरादित्य के सेनापति निम्बदेव ने यहाँ पर एक अतीव सुन्दर जिन मन्दिर निर्माण कराया था। आज वह शेषशाई विष्णु का मन्दिर बना हुआ है। वहां का प्रसिद्ध 'महालक्ष्मी मन्दिर' भी एक समय जैन मन्दिर था। इस समय वहाँ ४ शिखरबन्द जिनमन्दिर और ३ चैत्यालय दर्शनीय हैं। श्राविकाश्रम बोर्डिगहाऊस आदि जैन संस्थायें भी हैं।

बेलगाँव प्राचीन वेणुग्राम है। इसे रट्टवंश के लक्ष्मीदेव नामक राजा ने अपनी राजधानी बनाया था। रट्टवंश के सब राजा जैनी थे। जनश्रुति है कि एक दफा माननीय मुनिसंघ आया था। राजा रात को ही वन्दना करने गया। लौटते हुए इत्तफाक से किसी सेवक की मशाल की लौ बाँस के झुरमुट में लग गई जिसने वनाग्नि का रुप धारण कर लिया। मुनिसंघ ध्यान में लीन था, वह भी उसी वनाग्नि में अन्त गति को प्राप्त हुआ। राजा और प्रजा ने जब सुना तो उन्हें बड़ा पश्चाताप हुआ। प्रायश्चितरुप उन्होंने किले के अन्दर १०८ भव्य जिन मन्दिर बनवाये। इस प्रकार बेलगांव एक अतिशय क्षेत्र प्रमाणित होता है। इस समय भी वहां चार दि० जैन मन्दिर दर्शनीय हैं। किले के १०८ मंदिरों को आसिफ खां नामक मुसलमान शासक ने तुड़वा डाला था। तो भी उनमें से तीन मन्दिर किसी तरह अब शेष रहे हैं, जो अनूठी

कारीगरी के हैं। यद्यपि आज उनमें प्रतिमा विराजमान नही है तो भी उनके दर्शन मात्र से वन्द्यभाव पैदा होते हैं। इनमें 'कमल-वस्ती' अपूर्व है, जिसकी छत से लटकते हुए पांच कमल छत्र शिल्पकारी की आश्चर्यकारी रचना है।

स्तवनिधि (अतिशय क्षेत्र)

यह दक्षिण प्रांत का अतिशय क्षेत्र हैं। बेलगांव से ३८ मील और निपाणी से तीन मील दूर है। यहाँ एक परकोटे में ४ मंदिर एक मानस्तम्भ है और एक क्षेत्रपाल का मन्दिर है। यह मन्दिर ११०० वर्ष प्राचीन है। यहां मूलसंघ देशीयगण पुस्तक गच्छ के आचार्य वीर नन्दी सिद्धान्त चक्रवर्ती का एक लेख है जो आचार-सार के कर्ता जान पड़ते हैं। जिनका समय शक सं १०७५ है।+ इसे किसने और कब प्रचारित किया, यह कुछ ज्ञात नही होता। यहां लोग क्षेत्रपाल के मंदिर में मनौती मनाने के लिए आते रहते हैं।

इलोरा गुफा मन्दिर

मनमाड़ जङ्क्शन से लारी में इलोरा जाना चाहिए। इलोरा का प्राचीन नाम इलापुर है। और वह मान्यखेट (मलखेड़) के राष्ट्रकूट (राठौरवंश) राजाओं की राजधानी रही है। यहाँ पर पहाड़ को खोदकर बड़े-बड़े मन्दिर बनवाये गये हैं। वैष्णव मंदिर में बड़ा 'कैलाश मन्दिर' अद्भुत है। बौद्धों के भी कई मन्दिर हैं। नं० ३० से नं० ६४ तक के मंदिर जैनियों के हैं। इनमें 'छोटा-कैलाश' शिल्पकारी का अद्भूत नमूना है। 'इन्द्रगुफा' और 'जगन्नाथ गुफा' मंदिर दो मंजिले दर्शनीय हैं। ऊपर चढ़कर पहाड़ की चोटी पर एक चैत्यालय है, जिसमें भ० पार्श्वनाथ की शक सम्वत् ११५० की प्रतिष्ठा की हुई प्रतिमा विराजमान हैं। यहां

+ देखो, जैन सिद्धान्त भास्कर भा० ११ कि० २

दर्शन-पूजा करके आन्नद आता है। क्या ही अच्छा हो, यदि यहां पर नियमित रूप से पूजन-प्रक्षाल हुआ करे।

मांगीतुंगी

मनमाड़ और नासिक स्टेशनों से ३० मील दूर मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र है, जहां मोटर-लारी में जाया जाता है। श्री रामचन्द्रजी, हनुमान जी, सुग्रीव, गवय-गवाक्ष, नील-महानील आदि ९९ करोड़ मुनिजन यहाँ से मुक्त हुए है। यह स्थान जंगल में बड़ा रमणीक है। चारों तरफ फैली हुई पर्वतमालाओं के बीच में मांगी और तुंगी पर्वत निराली शान के खड़े हुए हैं। पर्वत की चोटियाँ लिंगाकार दूर से दिखाई पड़ती है। उन लिंगाकार चोटियों के चारों तरफ गुफा मन्दिर बने हुए हैं। तलैटी मैं दो प्राचीन मंदिर हैं। हाल में एक मानस्तम्भ भी दर्शनीय बना है। ठहरने के लिए धर्मशालायें हैं। मांगी पहाड़ की चौड़ाई तीन मील है। यद्यपि चढ़ाई कठिन है, परन्तु सावधानी रखने से खलती नहीं हैं। इस पर्वत पर चार गुफा मंदिर है। जिनमें मूल नायक भद्रवाहु स्वामी की प्रतिमा है। अन्य प्रतिमाओं में कुछ भट्टारकों की भी हैं। किन्तु सब ही प्रतिमायें ११ वीं १२ वीं शताब्दी की हैं। भद्रवाहु स्वामी की प्रतिमा का होना इस बात की दलील है कि उन्होंने इस पर्वत पर भी तप किया था। वन्दना करके यहां से दो मील दूर तुंगी पर्वत पर जाते हैं। मार्ग संकीर्ण है और चढ़ाई कठिनसाध्य है, परन्तु सावधानी रखने से बच्चे भी बड़े मजे में चले जाते हैं। इस रास्ते में श्रीकृष्ण जी के दाह संस्कार का कुण्ड भी पड़ता है। यदि वस्तुत: यहीं पर बलदेव जी ने अपने भाई नारायण का दाह संस्कार किया था, तो इस पर्वत का प्राचीन नाम 'शृङ्गी' पर्वत होना चाहिये, क्योंकि 'हरिवंश पुराण' (६२; ७३) में उसका यहीं नाम लिखा है। तुङ्गी पहाड़ पर तीन गुफा मन्दिर हैं, जिनके दर्शन

करना चाहिए। प्रतिमायें पुराने ढ़ंग की हैं। उनके स्थान पर नवीन शिल्पकारी की प्रतिमायें विराजमान करने का विचार प्रबन्धकों का है, परन्तु क्षेत्र की प्राचीनता को बताने वाली यह प्रतिमायें उस अवस्था में भी वहां अवश्य रहनी चाहिए। यहां मूलनायक श्री चन्द्रप्रभू स्वामी की प्रतिमा करीब ४ फुट ऊँची पद्मासन है। मार्ग में उतरते हुये एक 'अद्भुत जी' नामक स्थान मिलता है, जहां पर कई मनोज्ञ और प्राचीन प्रतिमायें दर्शनीय हैं। यहीं पर एक कुण्ड है। मांगीतुंगी से उसी लारी में गजपंथा जी जावे।

गजपंथा

गजपंथ क्षेत्र प्राचीन है और वह नासिक के समीप है। नासिक का उल्लेख भगवती आराधना में किया गया है और गजपंथ का उल्लेख पूज्यपाद की निर्वाण भक्ति में है और असग कवि के शान्तिनाथ चरित्र में पाया जाता है, पर वह यही है यह विचारणीय है। वर्तमान गजपंथा पर्वत ४०० फीट ऊँचा छोटा सा मनोहर हैं। गजपंथ से ७ बलभद्र और गजकुमार आदि आठ करोड़ मुनिगण मोक्ष पधारे हैं। धर्मशाला की इमारत नई और सुन्दर है। बीच में मानस्तम्भ सहित जिन मंदिर है। इस मानस्तम्भ को महिला रत्न कुंकुबाई जी ने निर्माण कराया है। यहां से १॥ मील दूर गजपंथ पर्वत है। नीचे बंजीबाबा का एक सुन्दर मंदिर और उदासीनाश्रम है। यहीं वाटिका में भट्टारक क्षेमेन्द्रकीर्ति जी की समाधि बनी हुई है। यहीं से पर्वत पर चढ़ने का मार्ग है, जिस पर थोड़ी दूर चलते ही सीढ़ियां मिल जाती हैं। कुल ४३५ सीढ़ियां हैं। पहले ही दो नये बने हुए मंदिर मिलते हैं। जो मनोरम हैं। एक मंदिर में श्री पार्श्वनाथ जी की विशालकाय प्रतिमा दर्शनीय हैं। इन मंदिरों के बगल में दो प्राचीन गुफा मंदिर मिलते हैं। यह पहाड़ काट कर बनाये गए हैं और इनमें १२ वीं से

१९ वीं शताब्दी तक की प्रतिमायें और शिल्प दर्शनीय हैं. किन्तु जीर्णोद्धार के मिस से मंदिरों की प्राचीनता नष्ट कर दी गई है। प्रतिमाओं पर लेप कर दिया गया है, जिससे उनके लेख भी छिप गए हैं। दो स्थानों पर चरण बने हुए हैं। एक जल कुण्ड है। यहाँ से चार मील नासिक शहर जावें, जो हिन्दुओं का तीर्थ है। जैनियों का एक मंदिर है। यहां से इस ओर के शेष तीर्थों के दर्शन करने जावे अथवा सीधा बम्बई जावे। अब यहाँ पर एक ब्रह्मचर्याश्रम स्थापित हो गया है।

आष्टे (श्री विघ्नेश्वर-पार्श्वनाथ)

आष्टे अतिशय क्षेत्र शोलापुर जिले में दुधनी स्टेशन (दक्षिण रेलवे) से पास आलंद से करीब ३६ मील है। यहाँ एक अतीव प्राचीन चैत्यालय है, जिसमें मूल नायक श्री पार्श्वनाथ जी की प्रतिमा दो फुट ऊँची पद्मासन विराजमान है। वह सम्भवतः शकसम्वत् ५२८ की प्रतिष्ठित है। प्रतिवर्ष लगभग दो हजार यात्री दर्शनार्थ आते हैं।

उखलद अतिशय क्षेत्र

उखलद क्षेत्र परभणी जिले में पिगली (दक्षिण रेलवे) स्टेशन के करीब ४ मील पूर्णा नदी के किनारे पर है। यहाँ प्राचीन दि० जैन मंदिर पत्थर का बना हुआ–नदी के किनारे पर अत्यन्त शोभनीय है। यहाँ का प्राकृतिक सौन्दर्य अपूर्व है। मंदिर में श्री नेमिनाथ जी की काले पाषाण की वृहदाकार प्रतिमा विराजमान हैं, जिनके अँगूठे में एक समय पारस पत्थर लगा हुआ था। कहते हैं वहाँ के मुसलमान शासक ने जब उसे लेना चाहा, तो वह अपने आप छूटकर नदी में जा पड़ा और मिला नही। इसलिए यह अतिशय क्षेत्र हैं और यहाँ प्रति वर्ष माघ में मेला होता है। मंदिर का कुछ भाग नदी में बह गया था। अतः प्रतिमा जैनिन्द्र नवागढ़

में मन्दिर बनवा कर यहाँ विराजमान कर दी गई, यह उखलद के पास ही है।

श्री क्षेत्र कुण्डल

सतारा जिले में यह क्षेत्र है। पूना सतारा लाइन पर किर्लोस्कर वाढ़ी स्टेशन (दक्षिणी रेलवे) से सिर्फ तीन मील है। गांव में एक पुराना दि० जैन मन्दिर पार्श्वनाथ जी का है। गांव के पास पहाड़ पर दो मन्दिर और हैं (१) झरी पार्श्वनाथ मंदिर-इस में पार्श्व-प्रतिमा पर अधिक जल वृष्टि होती है, इसलिए 'झरी पार्श्वनाथ' कहते हैं, (२) गिरीपार्श्वनाथ मन्दिर है। कहते हैं कि पहले यहां के इराण्णा गुफा मन्दिर में भ० महावीर की मूर्ति थी। श्रावण मास में यहाँ मेला होता है।

श्री क्षेत्र कुम्भोज

यह क्षेत्र हातका लंगड़ा स्टेशन से मील है। गांव में दो मंदिर हैं। पर्वत पर पाँच दि० जैन मंदिर प्राचीन हैं। श्री बाहुबलि स्वामी की चरणपादुकायें हैं। इस क्षेत्र का माहात्म्य अज्ञात है यहां मुनि समन्तभद्र जी द्वारा संस्थापित गुरुकुल हैं। सन्मति नामक मराठी का मासिक पत्र भी निकलता है। बाहुबलि स्वामी की विशाल मूर्ति भी प्रतिष्ठित है। अब इस क्षेत्र की विशेष प्रगति हो गई है। ऊपर जाने को सीढ़ियां बनी हुई हैं।

श्री क्षेत्र कुलपाक

बेजवाड़ा लाइन पर अलेर स्टेशन से करीब ४ मील कुलपाक प्राचीन क्षेत्र हैं, जिसका सम्बन्ध श्री आदिनाथ स्वामी की प्रतिमा से है जो 'माणिक स्वामी' कहलाती है। किन्तु वह प्रतिमा चोरी चली गई। तब हरे वर्ण की प्रतिमा विराजमान कर दी गई। इस मंदिर पर श्वेताम्बरों ने अधिकार कर लिया है।

दही गाँव

दही गाँव जिला शोलापुर में डिक्सल (मध्य रेलवे) स्टेशन

से २८ मील है। यहां लाखों रुपये की कीमत का दि० जैन मंदिर और मानस्तम्भ है। ये इतने ऊँचे हैं कि इनकी शिखिरें मीलों दूर से दिखाई पड़ती हैं। यहां १० दिगम्बर जैन मंदिर हैं। वहीं पर ब्र० महती सागर के चरण चिह्न हैं, जो एक विद्वान् और महान धर्म प्रचारक थे। सं० १८८६ में उनका स्वंगवास इसी स्थान पर हुआ था। मराठी भाषा में रचे हुये उनके कई ग्रन्थ मिलते हैं।

धारा शिव की गुफायें

उस्मानाबाद जिले में येडसी (मध्य रेलवे) स्टेशन के करीब दो मील दूर धारा शिव की गुफाये हैं। यहां पर पर्वत को काट कर गुफा मंदिर बनाये हैं, जिनकी संख्या नौ है और अति प्राचीन हैं। तेईसवें तीर्थङ्कर श्री पार्श्वनाथ के तीर्थ में चम्पा के राजा करकण्डू यहां दर्शन करने आये थे। उन्होंने पुरातन गुफा–मंदिरों का जीर्णोद्धार कराया था, जिनको नील-महानील नामक विद्या–धर राजाओं ने बनवाया था। साथ ही दो एक नये गुफा मंदिर भी उन्होंने बनवाये थे, वस्तुतः यह गुफा मंदिर बड़ीं २ पुरानी ईटों व पत्थरों के ऐसे बने हुए हैं कि उनकी प्राचीनता स्वतः प्रगट होती है। इसमें भ० पार्श्वनाथ और भ० महावीर की अनूठी दर्शनीय प्रतिमा विराजमान हैं, जिनकी कला दर्शनीय प्राचीन हैं। पार्श्वनाथ स्वामी की प्रतिमा बालू की बनी हुई नौ फीट ऊँची पद्मासन है और उस पर रोगन हो रहा है। यहां की यह और अन्य मूर्तियां अनूठी कारीगरी की है।

बम्बई

बम्बई भारत का व्यापारिक और औद्योगिक मुख्य नगर है। यहां हीराबाग धर्मशाला में ठहरना चाहिए। सेठ सुखानन्द धर्मशाला भी निकट ही हैं। हीराबाग की धर्मशाला स्व० दानवीर सेठ माणिकचन्द जी ने बनवाई थी। इसी धर्मशाला में श्री भा०

दि० जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी का दफ्तर है, जिनके द्वारा अब दि० जैन तीर्थों का प्रबन्ध होता है। स्व० श्रीमती मनगबाई जे० पी० द्वारा संस्थापित 'श्राविकाश्रम' उल्लेखनीय संस्था है। जुबिलीबाग (तारदेव) में उसे अवश्य देखने जायें। वहीं पास में श्री दि० जैन बोर्डिंग हाउस है। जिसमें चैत्यालय के दर्शन करना चाहिए। चौपाटी में सेठ सा० का चैत्यालय अनूठा बना हुआ है वहीं पर श्री सौभाग्य जी शाह का चैत्यालय भी दर्शनीय है। संघपति घासीराम जी का भी एक सुन्दर चैत्यालय हैं। वैसे दि० जैन मन्दिर केवल दो हैं। (१) भूलेश्वर में और (२) गुलालबाड़ी में। भूलेश्वर के मन्दिर में अच्छा शास्त्र भण्डार भी हैं। इन सबके दर्शन करना चाहिए। इस नगर में यदि वृहद् जैन संग्रहालय संस्थापित किया जाय तो जैनियों का महत्व प्रकट हो। यहां बहुत से दर्शनीय स्थान है जिनको मोटर बस में बैठकर देखना चाहिये। यहां से सूरत जावे।

सूरत—(विघ्नहर पार्श्वनाथ)

सूरतनगर (पश्चिम रेलवे) समुद्र से केवल दस मील दूर है। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के समय से यह व्यापार का मुख्य-केन्द्र है। चन्दाबाड़ी में जैन धर्मशाला हैं और मन्दिर भी है। प्रतिमायें मनोज्ञ हैं। वैसे यहां कुल सात दि० जैन मन्दिर हैं गोपीपुरा-नवापुरा और चन्दाबाड़ी में हैं। नवापुरा में एक श्राविकाश्रम भी है। चन्दाबाड़ी में जैन विजयप्रेस, दि० जैन पुस्तकालय व जैन मित्र आफिस आदि हैं, जिनके द्वारा इस शताब्दिमें सारे भारतके जैनियों में विशेष जागृति और धर्मोन्नति की गई हैं। सूरतके पास कटार गांव में भ० श्री विद्यानन्द जी की चरणपादुकायें हैं—वह उनका समाधि स्थान है। महुआ ग्राम भी सूरत के निकट हैं, जहाँ श्री विघ्नहर पार्श्वनाथ का भव्य मन्दिर हैं। इसमें भ० पार्श्वनाथजी की मनोज्ञ और प्राचीन प्रतिमा अतिशय-युक्त है, प्राचीन सचित्र

ग्रन्थ भी है। यहाँ भी भट्टारकीय गद्दी रही है जिसे प्रत्येक वर्ण के लोग पूजते हैं। सूरत से बड़ौदा जाय।

बड़ौदा

बड़ौदा में केवल दो दि० जैन मन्दिर हैं। नईपोल के पास जैन धर्मशाला है। राजमहल आदि यहाँ कई दर्शनीय स्थान हैं। कलाभवन हस्तकला दर्शनीय है और ओरियंटल लायब्रेरी में प्राचीन साहित्य का अच्छा संग्रह है। यहाँ से पावागढ़ लारियों में ही जाना चाहिए। रेल से बड़ौदा-रतलाम लाइन पर चापानेर रोड उतरें वहाँ से आधा मील चापानेर में यह क्षेत्र है।

पावागढ़ सिद्धक्षेत्र

पावागढ़ में तीन धर्मशाला हैं। यहां दो मन्दिर हैं। एक सुन्दर मानस्तम्भ हालमें ही बना है, यहां पर मेला माघ सुदी १३ से तीन दिन तक सं० १८३८ से भरता है। धर्मशाला के पीछे ही पर्वत पर चढ़ने का मार्ग कंकरीला होने के कारण दुर्गम है। लगभग छै मील की चढ़ाई है, जिसमें कोटके सात बड़े-बड़े दरवाजे पार करने पड़ते हैं। पांचवें दरवाजे के बाद छटवें द्वार के बाहर भीत में एक दिगम्बर जैन प्रतिमा पद्मासन १।। फीट ऊँची उकेरी हुई लगी बताई गई थी, जिस पर सं० ११३४ लिखा था, परन्तु हमें वह देखने को नहीं मिली। अन्तिम 'नगरखाना दरवाजा' पार करने पर दि० जैनियों के मन्दिर प्रारम्भ होते हैं, जो लाखों रुपयों की लागत के कुल पांच है। मध्यकाल में पावागढ़ पर अहमदाबाद के बादशाह मुहम्मद बेगड़ा का अधिकार हो गया था। उसने इन मन्दिरों की सं० १५४० में बहुत कुछ नष्ट भ्रष्ट कर दिया था। बहुतेरे मन्दिर अब भी टूटे पड़े हैं। कतिपय मन्दिरों के शिखर फिर से बनवा दिये गए हैं। इसे सिद्धक्षेत्र कहते हैं। यहाँ से श्री रामचन्द्र जी के पुत्र लव-कुश और लाट देश का राजा पाँच करोड़ मुनियों केसाथ मोक्ष गए बतायें जाते है। ऊपरतीन मंदिरों का समूह

यह भी हैं? प्राचीन कारीगरी के बने हैं, परन्तु इनकी शिखरें नई बनाई प्रतीत होती हैं। इनमें से पहिले मंदिरों के सामने एक गज भरऊँचा स्तम्भ बना हुआ है। जिस पर दोदि० जैन प्रतिमायें मध्य कालीन प्रतिष्ठित हैं। मंदिरों में सं० १५४६ से १९६७ तक की प्रतिमायें विराजमान हैं। दूसरे मंदिर में विराजित श्री चिन्ता–मणि पार्श्वनाथ जी की हरित पाषाण कीं प्रतिमा मनोज्ञ और अतिशययुक्त हैं। इस प्रतिमा को सं० १६६० वैशाख शुक्ला १३ के दिन मूल संघ के भ० श्रीं प्रभाचन्द्र जी के प्रति शिष्य और भ० सुमतिकीर्तिदेव के शिष्य वादी मदभंजन श्री भ० वादीभूषण के उपदेशानुसार अहमदाबाद निवासी किन्हीं हूमड़ जातीय श्रावक महानुभाव ने प्रतिष्ठित कराया था। थोड़ी दूर आगे चलने पर एक और मंदिर मिलता है, जिसका जीर्णोद्धार श्री चुन्नूलाल जी जरी वाले द्वारा सं० १९६७ में कराया गया हैं और तभी की प्रतिष्ठित जिन प्रतिमा भी विराजमान हैं। फिर तालाब के किनारे दो मंदिर हैं। एक मंदिर बड़ा है, जिसके प्राकार की दीवार पर कतिपय मनोज्ञ दि० जैन प्रतिमायें अच्छे शिल्प चातुर्य की बनी हुई हैं और प्राचीन हैं। इस मंदिर का जीर्णोद्धार सं० १९३७ में सरंडा के सेठ गणेश गिरधर जी ने कराया था। तभी की प्रतिष्ठित श्री सुपार्श्वनाथ जी प्रभृति तीर्थङ्करों की पांच छः प्रतिमाये हैं। पार्श्वनाथ जी की एक प्रतिमा सं० १५४८ की है। शेष प्रतिमायें भ० वादीभूषण द्वारा प्रतिष्ठित हैं। इस मंदिर के सामने श्री लवकुश महामुनि की चरणपादुकायें (सं० १३३७) एक गुमटी में बनी हुई हैं। उनके सन्मुख एक दूसरा मंदिर बन गया है। इनके आगे सीढ़ियों की चढ़ाई है, जिनके दोनों तरफ दि० जैन प्रतिमायें लगी हुई हैं। कालिकादेवी का मंदिर है, जिसे हिन्दू पूजते हैं। इन्हीं सीढ़ियों से एक तरफ थोड़ा चलने पर पहाड़ की नोक आती है। यहीं लवकुश का निर्वाण स्थान है। वापस बड़ौदा आकर

अहमदाबाद जावे।

अहमदाबाद

अहमदाबाद गुजरात प्रान्त का खास शहर है। प्राचीन काल से जैन केन्द्र रहा है। पहले वह असावल कहलाता था, परन्तु अहमदशाह (सन् १४४२ ई०) ने उसे नये सिरे से बसाया और उनका नाम अहमदाबाद रक्खा। स्टेशन से डेढ़ मील दूर चौक बाजार में त्रिपोल दरवाजे के पास स्व० सेठ माणिकचन्द्र जी द्वारा स्थापित प्रसिद्ध प्रे० दि० जैन बोर्डिग हाउस है। यहीं एक दि० जैन धर्मशाला व दो प्राचीन दि० जैन मंदिर हैं। माणिक चौक मांडवी पोल में भी दो मंदिर प्राचीन हैं। एक चैत्यालय स्टेशन के पास है। श्री हठीसिंह जी का श्वेताम्बरीय मंदिर दर्शनीय शिल्प का बना है। उसे सिद्धाचल की यात्रा से लौटने पर श्री हठीसिंह ने दिल्ली दरवाजे पर सं० १९०३ में बनवाया था। इस विशाल मंदिर के चहुँ ओर ५२ चैत्यालय बने हुए हैं। अहमदाबाद में लैस-कपड़ा आदि बहुत बनता है यहाँ के देखने योग्य स्थान देख कर पालीताना जाना चाहिए। विरमगांव और मिहोर में गाड़ी बदलती है।

पालीताना–शत्रुन्जय

पालीताना स्टेशन से करीब एक मील दूर नदी के पास धर्मशाला है। शहर में एक अर्वाचीन दि० जैन मंदिर अच्छा बना हुआ है। मूलनायक श्री शान्तिनाथ जी की प्रतिमा सं० १९५१ की बनी है। पहाड़ पर दो दि० जैन मंदिर थे, परन्तु छोटा मंदिर अब श्वेताम्बर भाईयों के अधिकार में है। यहाँ श्वेताम्बरीय जैनी, उनके मंदिर और संस्थायें अत्यधिक हैं। एक श्वे० आगम मंदिर लाखों रुपये खर्च करके बनवाया गया है, जिसमें श्वे० आगमसूत्र पाषाण पर अङ्कित कराये गये हैं। शहर से पहाड़ ३५ मील है,

जहाँ तक तांगे जाते हैं। पहाड़ पर लगभग तीन मील चढ़ने के लिए सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। यह सिद्ध क्षेत्र है। यहाँ से तीन पाँडव कुमार - युधिष्ठर, अर्जुन और भीम द्राविड़ देश के राजा और आठ करोड़ मुनि मोक्ष पधारे थे। मन्दिर के परकोट के पास पहुंचने पर पाँडवकुमारों की खड्गासन मूर्तियाँ श्वेताम्बरी हैं। परकोटे के अन्दर लगभग ३५०० श्वे० मन्दिर अपूर्व शिल्पचातुर्य के दर्शनीय हैं। श्रीआदिनाथ, सम्राट कुमार-पाल, विमलशाह और चतुर्मुख मन्दिर, उल्लेखनीय है। रतनपोल के पास एक दि० जैन मन्दिर फाटक के भीतर है। इस फाटक का सुन्दर दरवाजा आरा निवासी बाबू निर्मलकुमारजी ने लगवाया था। शहर के बाग वगैरह देखने योग्य स्थान है। शहर में एक छोटा-सा दि० जैन मन्दिर और धर्मशाला है, परन्तु यहां से तीन मील तलहटी की धर्मशाला में ठहरना चाहिए। सामान यहाँ से लेवें।

गिरिनार (ऊर्जयन्त)

गिरिनार (ऊर्जयन्त) मनोहर पर्वतराज हैं—उसके दर्शन दिल को अनूठी शान्ति देते हैं। धर्मशाला के ऊपर ही गगनचुम्बी ऊर्जयन्त अपनी निराली शोभा दिखाता है। तलहटी में एक दि० जैन मन्दिर है, जिसमें सं० १५१० का एक यन्त्र और १५४८ की साह जीवराज जी पापड़ीबाल द्वारा प्रतिष्ठित प्रतिमा प्राचीन है। शेष मूर्तियाँ अर्वाचीन है। मूलनायक श्री नेमिनाथ जी की कृष्ण पाषाण की प्रतिमा सं० १९४७ पिपलिया निवासी श्री पन्नालाल जी टोंग्या ने प्रतिष्ठित कराई थी। प्रतापगढ़ के श्री बंडीलाल जी के वंशज एक कमेटी द्वारा इस तीर्थराज का प्रबन्ध करते हैं। यह धर्मशाला व कोठी श्री बंडीलाल जी के प्रयत्न के फल हैं। धर्मशाला से पर्वत की चढ़ाई का दरवाजा १०० कदम है। वहाँ पर शिलालेख हैं, जिससे प्रगट है कि दीवान वेचरदास के उद्योग से १॥ लाख रुपयों की लागत द्वारा काले पत्थर की

मजबूत सीढ़ियाँ गिरिनार की चारों टोंको पर लगवाई गई हैं। यहाँ से चढ़ाई शुरू होती हैं।

गिरिनार महान सिद्धक्षेत्र है। बाईसवें तीर्थङ्कर श्री नेमिनाथ जी का मोक्ष स्थान यहीं है। यहीं पर भगवान् ने तप किया था— केवलज्ञान प्राप्त किया था और धर्मोपदेश दिया था। राजमती जी ने यहीं से सहस्राम्रवन में आकर उनसे घर चलने की प्रार्थना की थी। पर भगवान् के गाढ़े वैराग्य के रंग में उनका मन भी रंग गया तो यह भी आर्यिका हो, यहीं तप करने लगी थीं। श्री नारायण कृष्ण और बलभद्र ने यहीं आकर तीर्थङ्कर भगवान् की वन्दना की थी। भगवान् के धर्मोपदेश से प्रभावित होकर यहीं पर श्रीकृष्ण जी के पुत्र प्रद्युम्न-शंबूकुमार आदि दि० मुनि हुए थे और कर्मों को विध्वंश कर सिद्ध परमात्मा हुए थे। गजकुमार मुनि पर सोमिलविप्र ने यहीं उपसर्ग किया था, जिसे समभाव से सहन कर वह मुक्त हुए थे। भ० नेमिनाथ के गणधर श्री वरदत्त जी भी यही से अगणित मुनिजनों सहित मोक्ष सिधारे थे। गर्ज यह है कि गिरिनार पर्वतराज महापवित्र और परमपूज्य निर्वाणक्षेत्र हैं। उनकी वन्दना करते हुए स्वयमेव ही आत्माह्लाद प्राप्त होता है— भक्ति से हृदय गद्गद् हो जाता है और कवि की यह उक्ति याद आती है—

"मा गा गर्वममर्त्यपर्वत परां प्रीतिं भजतस्त्वया।
भ्रम्यंते रविचंद्रमः प्रभृतयः के के न मुग्धाशयाः॥
एको रैवतभूधरो विजयतां यद्दर्शनात् प्राणिनो।
यांति भ्रांति विवर्जिताः किल महानंदसुखश्रीजुषः॥"

भावार्थ—'हे पर्वत! गर्व मत करो सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र तुम्हारे प्रेम में ऐसे मुग्ध हुए है कि रास्ता चलना भूल गए हैं, (वह प्रदि-

दिन तुम्हारी ही परिक्रमा देते हैं) किन्तु यही क्या ? ऐसा कौन है जो तुम पर मुग्ध न हो ! जय हो, एक मात्र पर्वत रैवत की ! जिसके दर्शन करने से लोग भ्रान्ति को खोकर आनन्द का भोग करते और परम सुख को पाते हैं !"

गिरिनार के दूसरे नाम ऊर्जयन्त और रैवत पर्वत भी हैं। वह समुद्रतल से ३६६६ फीट प्राकृतिक सौन्दर्य का अपूर्व स्थल है। उस पर तीर्थो, मन्दिरों, राजमहलों, क्रीड़ाकुन्जों, झरनों और लहलहाते वनों ने उसकी शोभा अनूठी बना दी है। उसकी प्राचीनता भी श्री ऋषभदेव जी के समय की है। भरत चक्रवर्ती अपनी दिग्विजय में यहाँ आये थे। एक ताम्रपत्र से प्रकट है कि ई० पूर्व ११४० में गिरिनार (रैवत) पर भ० नेमिनाथ जी के मंदिर बन गए थे। गिरिनार के पास ही गिरिनगर बसा था, जो आजकल जूनागढ़ कहलाता है। यहीं पर चन्द्रगुफा में आचार्यवर्य्य श्रीधरसेन जी तपस्या करते थे और यहीं पर उन्होंने भूतबलि और पुष्पदन्त नामक आचार्यों को आदेश दिया था कि वह अवशिष्ट श्रुतज्ञान को लिपिबद्ध करे। सम्राट अशोक ने यहीं पर जीवदया के प्रतिपादक धर्मलेख पाषाणों पर लिखाये थे। छत्रपरुद्रसिंह के लेख से प्रगट है कि मौर्य काल में एवं उसके बाद भी गिरिनार के प्राचीन मंदिर थे। वे तूफान से नष्ट हो गये थे। मौर्य सम्राट चन्द्रगुप्त के गुरु श्री भद्रबाहु स्वामी भी गिरिनार पधारे थे। दि० जैन मुनिगण गिरिनार पर ध्यानलीन रहा करते थे। छत्रप रुद्रसिंह ने सम्भवतः उनके लिए गुफायें बनवाई, आचार्य समन्तभद्र ने जो विक्रम की '३ री-४ थीं' शताब्दी के आचार्य हैं, उन्होंने स्वयंभू-स्तोत्र में भगवान नेमिनाथ का स्तवन करते हुए लिखा है कि आज मुनिगण यात्रार्थ आते हैं। समन्तभद्र ने स्वयं भी यात्रा की थी। जैसा कि स्वयंभूस्त्रोत से प्रकट है। 'हरिवंश पुराण' में श्री जिन-सेनाचार्य ने लिखा है कि अनेक यात्री श्री गिरिनार की वन्दना

करने आते हैं। श्वेताम्बरीय 'उपदेशतरङ्गिणी' आदि ग्रन्थों से प्रगट हैं कि पहले यह तीर्थ दि० जैनों के अधिकार में था। श्वे० संघपति धारक ने अपना कब्ज़ा करना चाहा, परन्तु गढ़ गिरिनार के राजा खङ्गार ने उसे भगा दिया था। खङ्गार राजा चूड़ासमास वंश के थे। इस वंश ने १० वीं से १६ वी शताब्दी तक राज किया था। वह दिगम्बर जैन धर्म के संरक्षक थे। उन्हीं के वंश में राजा मंडलीक हुए थे, जिन्होंने भ० नेमिनाथ का सुन्दर मंदिर गिरिनार पर बनवाया था। सुलतान अलाउद्दीन के समय में दिल्ली के प्रतिष्ठित दिग० जैन सेठ पूर्णचन्द्र जी भी संघ सहित यहाँ यात्रा को आये थे। उस समय एक श्वेताम्बरीय संघ भी आया था। दोनों संघों ने मिलकर साथ-साथ वन्दना की थी। संक्षेप में गिरिनार का यह इतिहास है। दक्षिणी भारत के मध्य-कालीन दिगम्बर जैन शिलालेखों से भी गिरिनार तीर्थ की पवित्रता प्रमाणित होती है।

तलहटी में लगभग दो मील पर्वत पर चढ़ने के पश्चात् सोरठ का महल आता है। यह चूड़ासमासवंश राजाओं का गढ़ था। एक छोटी सी दि० जैन धर्मशाला भी है। किन्तु सोरठ के महल तक पहुँचने के पहले ही मार्ग में एक सुखा कुण्ड मिलता है जिस के ऊपर गिरिनार पर्वत के पार्श्व में एक पद्मासन दि० जैन प्रतिमा अङ्कित है। इस प्रतिमा की नासिका भग्न है। इस मूर्ति की बगल में ही एक युगल पुरुष व स्त्री की मूर्ति बनी हुई है और कमलनाल पर जिन प्रतिमा अङ्कित है। युगल सम्भवतः धरणेन्द्र-पद्मावती होंगे। वह मूर्तियाँ प्राचीन काल की हैं। यहां से थोड़ी दूर आगे चढ़ने पर सोरठ महल पहुंचने से पहले ही मार्ग से जरा हट कर चरणपट्ट मिलता है। इस पट्ट में चरणपादुकायें बनी हुई हैं, जिनके ऊपर सीधे हाथ पर एक छोटे चरणचिन्ह बने हैं। उनके बराबर एक लेख है जो घिस जाने की वजह से पढ़ने में नहीं आता है।

इन स्थानों की अब कोई वन्दना नही करता। किन्तु इनकी रक्षा करना आवश्यक है।

सोरठ महल से जैन मन्दिर प्रारम्भ हो जाते है। इन सब पर प्राय: श्वे० जैनियो का अधिकार है। श्री कुमारपाल--तेजपाल आदि के बनवाये हुये मन्दिर अवश्य दर्शनीय हैं, उनका शिल्प-कार्य अनूठा है। इन मन्दिरों में एक प्राचीन मन्दिर 'ग्रेनिट' (**granite**) पाषाण का है, जिसकी मरम्मत सं० ११३२ में सेठ मानसिह भोजराज ने कराई थी और जिसे मूल में कर्नल टाड सा० दिगम्बर जैनियों का बताते है। यही श्री नेमिनाथ मन्दिर के दालान में वर्जेस सा० ने एक चरणपादुका सं० १६१२ की भ० हर्षकीर्ति की देखी थी। मूलसंघ के इन भट्टारक ने तब यहां की यात्रा की थी। मूलत: यह मन्दिर दि० जैन ही है। यहां से आगे एक कोट में दो मन्दिर बड़े रमणीक और विशाल दिगम्बर जैनों के हैं। इनमें एक प्रतापगढ़ निवासी श्री बडोलाल जो का सं० १९१५ का बनवाया हुआ हैं। दूसरा लगभग इसी समय का सोलापुर वालों का है। इसके अतिरिक्त एक छोटा-सा मन्दिर दिल्ली के श्री सागरमल महावीर प्रसाद जी ने सं० १९७७ में बनवाया था। इस मन्दिर में हो यहाँ पर सबसे प्राचीन खड्गासन प्रतिमा विराजमान है, जिस पर कोई लेख पढ़ने में नही आता है, वैसे श्री शान्तिनाथ जी की सं० १६६५ की प्रतिमा प्राचीन हैं। सं० १९२० की नेमिनाथ स्वामी की एक प्रतिमा गिरिनार जी में प्रतिष्ठित की हुई है, जिससे अनुमानित है कि उस वर्ष यहां जिन बिम्ब प्रतिष्ठा हुई थी। इस पहली टोंक पर ही विशाल मन्दिर हैं। अन्य शिखरों पर यह विशेषता नहीं है।

इस मन्दिर-समूह के पास ही राजुल जी की गुफा हैं वहाँ पर राजुलजी ने तप किया था। इसमें बैठकर घुसना पड़ता है।

उसमें राजुल जी की मूर्ति पाषाण में उकेरी हुई है और चरण पादुकायें हैं।

यहाँ से दूसरी टोंक पर जाते हैं जो अम्बा देवी की टोंक कहलाती है।+ यहां पर अम्बा देवी का मन्दिर है, जो मूलत: जैनियों का है। अम्बिका देवी नेमिनाथ की यक्षिणी है। अब इसे हिन्दू और जैनी दोनों पूजते हैं। यहां पर चरण पादुकायें भी है। आगे तीसरी टोंक आती है, जिस पर नेमिनाथ स्वामी के चरण-चिन्ह हैं। यहीं बाबा गोरखनाथ के चरण और मठ है, जिसे जैनेतर पूजते हैं। इस टोंक से लगभग चार हजार फीट नीचे उतर कर चौथी टोंक पर जाना होता है। इस पर चढ़नेके लिए सीढ़ियाँ नहीं हैं—बड़ी कठिन चढ़ाई है। सुना था कि इस पर भी सीढ़ियां बनेंगी। टोंक के ऊपर एक काले पाषाण पर श्री नेमिनाथ जी की दिगम्बर प्रतिमा और पास ही दूसरी शिला पर चरण चिन्ह हैं। सं० १२४४ का लेख है। कुछ लोगों का ख्याल है कि यहीं से नेमिनाथ स्वामी मुक्त हुए थे और कुछ लोग कहते है कि पांचवीं टोंक से नेमिनाथ स्वामी मोक्ष गये यह स्थान शम्बु-प्रद्युम्न नामक यादव कुमारों का निर्वाण स्थान है। इस टोंक से नीचे उतर कर फिर पाँचवीं टोंक पर जाना होता है। यह शिखर सबसे ऊँचा और अतीव सुन्दर है। इस पर से चहुँ ओर प्राकृतिक दृश्य नयनाभिराम दिखाई पड़ता है। टोंक पर एक मढ़िया के नीचे नेमिनाथ

+पुन्नाट संघी जिनसेन ने अपने हरिवंश पुराण में गिरिनार की सिंहवाहिनी या अम्बा देवी का उल्लेख किया है। और उसे विघ्नों का नाश करने वाली शासन देवी बतलाया है। उससे प्रकट है कि उस समय भी वहां अम्बा देवी का मन्दिर था।

गृहीतचक्राऽप्रतिचक्रदेवता तथोर्जयन्तालय सिंहवाहिनी।
शिवाय यस्मिन्निह सन्निधीयते क्व तत्र विघ्नाः प्रभवन्ति शासने ॥४४॥

स्वामी के चरण चिन्ह है। जिनके नीचे पास ही शिला भाग में उकेरी हुई एक प्राचीन दिगम्बर जैन पद्मासन मूर्ति है। यहां एक बड़ा भारी घण्टा बँधा हुआ है। वैष्णव यात्री इसे गुरुदत्तात्रय का स्थान कहकर पूजते हैं और मुसलमान मदारशाह पीर का तकिया कहकर जियारत करते है। इस टोंकसे ५-७ सीढ़ियां उतरने पर सं ११०८ का एक लेख मिलता है। नीचे उतर कर वापिस दूसरी टोंक तक आना होता है। यहां गोमुखी कुण्ड से दाहिनी ओर सहगाभ्रवन (सेसावन) को आना होता है, जहां भ० नेमिनाथ ने वस्त्राभूषण त्याग कर दिगम्बरीय दीक्षा धारण की थी। यहां से नीचे धर्मशाला को जाते हैं। इस पर्वतराज से ७२ करोड़ मुनिजन मोक्ष पधारे हैं।

गिरिनार से उत्तर-पश्चिम की ओर से २० मील दूर 'ढंक' नामक स्थान है, जहाँ काठियावाड़ में प्राचीन दिगम्बर जैन प्रतिमा दर्शनीय है। जूनागढ़ से जेतलसर महसाना होते हुए तारंगाहिल जाना चाहिए।

तारंगाजी

तारंगा बड़ा ही सुन्दर निर्जन एकान्तस्थान है। स्टेशन से करीब ३-४ मील दूर है। इस पवित्र स्थान से वरदत्त आदि साढ़े तीन करोड़ मुनिराज मुक्त हुए हैं। तलहटी में एक कोट के भीतर मन्दिर और धर्मशाला बने हुए हैं, परन्तु स्टेशन की धर्मशाला में ठहरना सुविधाजनक है। पर्वत पर धर्मशाला के पास ही १३ प्राचीन दिगम्बर जैन मन्दिर हैं, जिनमें कई वेदियों में ऊपर नीचे दि० प्रतिमायें विराजमान हैं। यहाँ पर सहस्रकूट जिनालय में ५२ चैत्यालयों की रचना अत्यन्त मनोहर है। यहां एक मन्दिर में श्री संभवनाथ जी की अत्यन्त प्राचीन प्रतिमा महा मनोज्ञ हैं।

पास में श्वेताम्बरीय मंदिर भी दर्शनीय हैं। इसे कई लाख रुपयों की लागत से सम्राट कुमारपाल ने बनवाया था। धर्मशाला से सम्भवतः उत्तर की ओर एक छोटासा पहाड़ है, जिसे 'कोटिशिला' कहते हैं। मार्ग में दाहिनी ओर दो छोटी सी 'मढ़ियां' हैं, जिनमें से एक में भट्टारक रामकीर्ति और दूसरी में उनके शिष्य भट्टारक पद्मनन्दि के चरण चिन्ह हैं। चरणचिन्हों पर के लेखों से स्पष्ट है कि सं० १६३६ फाल्गुन शुक्ल सप्तमी बुद्धवार को उन्होंने तारंगा जी की यात्रा की थी। वे मूलसंघ के आचार्य थे। मढ़ियों के पास पहाड़ की खोह में करीब १॥ हाथ ऊँचा एक स्तम्भ पड़ा है. जिस में प्राचीन चतुर्मुख दि० जैन प्रतिमा अङ्कित हैं। खड्गासन खण्डित प्रतिमा भी पड़ी है, जिस पर पुराने जमाने का लेप दर्शनीय है। ऊपर पहाड़ की शिखिर पर एक छोटे से मन्दिर में १॥ गज ऊँची खड्गासन जिन प्रतिमा है और चरण चिन्ह विराजित हैं। प्रतिमा पर सं० १९२१ का मूलसंघी भट्टारक वीरकीर्ति का लेख है। चरणों के लेख पढ़ने में नहीं आते। यहाँ सब से प्राचीन प्रतिमा श्रीवत्स चिन्ह अङ्कित सं० ११९२ सुदी ९ रविवार की प्रतिष्ठित है। लेख में भ० यशकीर्ति और प्राग्वाटकुल के प्रतिष्ठाकारक जी के नाम भी हैं। यहाँ की वन्दना करके दूसरी ओर एक मील ऊँची 'सिद्धशिला' नाम की पहाड़ी है। इसके मार्ग में एक प्राकृतिक गुफा बड़ी ही सुन्दर और शीतल मिलती है। ऊपर पर्वत पर दो टोंकें हैं। पहले श्री पार्श्वनाथ जी और कछुवा चिन्ह वाली मुनिसुव्रतनाथ जी की सफेद पाषाण की खड्गासन जिन प्रतिमायें हैं। उनमें से एक पर के लेख से स्पष्ट है कि सं० १९९६ में बैशाख सुदी ९ रविवार को जब कि चक्रवर्ती सम्राट जयसिंह शासनाधिकारी थे, उनके राज्यकाल में प्राग्वाटकुल के सा० लखम (लक्षमण) ने तारंगा पर्वत पर उस प्रतिविम्ब की प्रतिष्ठा कराई थी। दूसरी टोंक पर भ० नेमिनाथ की पद्मासन प्रति

पाषाण की मनोज्ञ प्रतिमा सं० १६५४ की प्रतिष्ठित है। यहीं पर सं० १६०२ के भ० सुरेन्द्रकीर्ति जी के चरणचिन्ह हैं। कुमारपाल प्रतिवोध नामक श्वेताम्बर ग्रन्थ से मालूम होता है कि कुमारपाल राजा के समय तक समूचे तारंगा तीर्थ पर दिगम्बर जैनों का एकाधिकार था। पर्वत की वन्दना करके वापस स्टेशन पर आ जावे और वहां से आबूरोड़ जावे।

आबू पर्वत

आबूरोड़ स्टेशन से आबू पर्वत १९ मील दूर है। आबू पर्वत पर दिलवाड़ा में विश्व विख्यात दर्शनीय जिन मन्दिर हैं। यहां दि० जैन धर्मशाला और बड़ा मंदिर श्री आदिनाथ स्वामी का है। शिलालेख से प्रकट है कि इस मंदिर की प्रतिष्ठा वि० सं० १४९४ में मिति बैशाख शुक्ल १३ को ईडर के भट्टारक महाराज ने कराई थी। दिलवाड़ा में श्री वस्तुपाल-तेजपाल और श्री विमल-शाह द्वारा निर्माणित संगमरमर के पांच मंदिर अद्भुत शिल्पकारी के बने हुए हैं। इनकी कारीगरी देखते ही बनती है। करोड़ों रुपयों की लागत से यह मंदिर संसार की आश्चर्य जनक वस्तुओं में गिने जाते हैं। इनके बीच में एक छोटा सा प्राचीन दिगम्बर जैन मंदिर भी है। इनके दर्शन करना चाहिए। इस क्षेत्र का मेला चैत बदी ८ को भरता है। यहाँ से अचलगढ़ जावे। वहां भी श्वेताम्ब-रीय जैनों के दर्शनीय मंदिर हैं। जिनमें १४४४ मन स्वर्ण की जिन प्रतिमायें विराजमान हैं। उन्हीं में दिगम्बर प्रतिमा भी बताई जाती है। इस अतिशयक्षेत्र के दर्शन करके अजमेर आवे।

अजमेर

चौहान राजाओं की राजधानी अजमेर आज भी राजपूताना का प्रमुख नगर है। कहते हैं कि उसे चौहान राजा अजयपाल ने बसाया था। इन चौहान राजाओं में पृथ्वीराज द्वि० और सोमेश्वर

दि० जैनधर्म के पोषक थे। नि:सन्देह अजमेर जैनधर्म का प्राचीन केन्द्र स्थान हैं। मूलसंघ के भट्टारकों की गद्दी यहाँ रही हैं और पहाड़ पर पुरातन जैन कीर्तियां थी। शहर में १३ शिखरबन्द मन्दिर और दो चैत्यालय हैं। मंदिरों में सेठ नेमिचन्द जी टीकमचन्दजी की नसियां कलामय दर्शनीय है। दूर-दूर के अजैन यात्री भी उसे देखने आते है। यह मन्दिर तीन मंजिल का बना हुआ है। पहली मजिल में अयोध्या और समवशरण की रचना रंग-बिरंगी मनोहर बनी हुई हैं। दूसरी मंजिल में स्फटिक माणिक आदि की प्रतिमायें विराजमान है। दीवालों पर तीर्थक्षेत्र के नक्शे व चित्र बने हुए हैं। तीसरी मंजिल में काठ के हाथी घोड़े आदि उत्सव का सामान है ! मन्दिर के सामने एक उत्तुंग-मानस्तम्भ बना हैं, जिसे सेठ भागचन्दजी ने बनवाया है। अन्य मन्दिर भी दर्शनीय हैं। एक प्राचीन भट्टारकीय गद्दी रही है। जिसमें कई भट्टारक प्रभावशाली हुए हैं। मन्दिर में भ० हर्षकीर्ति का विशाल शास्त्र भंडार है, जिनमें १५ वीं शताब्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों का अच्छा संग्रह है शहर में दरगाह आदि देखने योग्य चीजें हैं। यहां से राजपूताना और मध्यभारत की तीर्थ यात्रा के लिए उदयपुर मध्य जावे।

उदयपुर

उदयपुर में आठ दिगम्बर जैन मन्दिर हैं—दो चैत्यालय भी है। दो-तीन मन्दिरों में अच्छा शास्त्र भण्डार है। संभवनाथ जी के मन्दिर में शास्त्रों का अच्छा संग्रह है। एक मन्दिर अकेवालों का भी है। १५ वीं शताब्दी तक के लिखे हुए ग्रन्थ हैं। अनेक गुटकों में भी प्राचीन रचनाओं का संग्रह हैं। यहां राज्य की इमारतों और प्राकृतिक सौन्दर्य दर्शनीय हैं। यहां की झील संसार में प्रसिद्ध है। ४० मील दूर केशरिया जी तांगे में जावे।

केशरियाननाथ

कोयल नामक नदी के किनारे कंगूरेदार कोट के भीतर प्राचीन मन्दिर और धर्मशालायें बनी हुई हैं। मूलनायक श्री आदिनाथ जी की ३।। फुट ऊँची महामनोहर और अतिशययुक्त पद्मासन प्रतिमा है। यह मन्दिर ५२ देहरियों (देवकुलकाओं) से युक्त, विशाल और लाखों रुपयों की लागत का है। मूलतः यहां पर दिगम्बर जैन भट्टारकों का आधिपत्य था और उन्हीं की बनवाई हुई अठारवीं शताब्दी की मूर्तियां और भव्य इमारतें हैं। किन्तु आजकल जैन अजैन सब ही दर्शन पूजन करते हैं। यहां केशर खूब चढ़ाई जाती है। तीनों समय पूजा होती है। दूध का अभिषेक होता है। बड़े मन्दिर के सामने फाटक पर हाथी के ऊपर नाभिराजा और मरुदेवी जी की शोभनीय मूर्तियां बनी है। उनके दोनों ओर चरण हैं। मन्दिर के अन्दर आठ स्तम्भों का दालान हैं। उसके आगे जाकर सात फीट ऊँची श्यामवर्ण श्री आदिनाथ जी की सुन्दर दिगम्बरीय प्रतिमा विराजमान है। वेदी और शिखरों पर नक्कासी का काम दर्शनीय है। वहींसे एक मील दूर भगवान् की चरणपादुकाये हैं। यही से धूलियां भील के स्वप्न के अनुसार यह प्रतिमा जमीन से निकाली गई थी। धूलियां भील के नाम के कारण ही यह गांव धुलेव कहलाता है।

वीजोल्या—पार्श्वनाथ

बीजोल्या ग्रामके समीप ही आग्नेय दिशा में श्रीमत्पार्श्वनाथ स्वामी का अतिशयक्षेत्र प्राचीन और रमणीय हैं। सैकड़ों स्वाभाविक चट्टानें बनी हुई है। उनमें से दो चट्टानों पर शिलालेख और उन्नतशिखर पुराण नामक ग्रन्थ अंकित है। यहां एक कोट के अन्दर पार्श्वनाथ जी के पांच दि० जैन मन्दिर हैं। इन मन्दिरों को अजमेर के चौहान वंशी राजा पृथ्वीराज द्वि० और सोमेश्वर ने

सं० १२२६ को एक ग्राम भेंट किया था। इनको सन् ११७० ई० में लोलक नामक श्रावक ने बनवाया था। मालूम होता है कि यहां पर उस समय दि० जैन भट्टारकों की गद्दी थी। पद्मनन्दि-शुभचन्द्र आदि भट्टारकों की यहाँ मूर्तियाँ भी बनी हुई हैं। इसका प्राचीन नाम विन्ध्याचली था। यहाँ के कुण्डों में स्नान करने के लिए दूर-दूर से यात्री आते थे। शहर में दि० जैनियों की वस्ती और एक दि० जैन मंदिर है।

चित्तौड़गढ़

सन् ७३८ ई० में वप्पारावल ने चित्तौड़ राज्य की नींव डाली थी। यहाँ का पुराना किला मशहूर है, जिसमें छोटे बड़े ३५ तालाब और सात फाटक हैं। दर्शनीय वस्तुओं में कीर्तिस्तम्भ जयस्तम्भ, राणा कुम्भा का महल आदि स्थान हैं। कीर्तिस्तम्भ ८० फीट ऊँचा है। इसको दि० जैन बघेरवाल महाजन जीजा ने १२ वीं १३ वीं शताब्दी में प्रथम तीर्थङ्कर श्री आदिनाथ जी की प्रतिष्ठा में बनवाया था। इसमें आदिनाथ भगवान की मूर्ति विराजमान हैं। और अनेकों दिगम्बर मूर्तियाँ उकेरी हुई हैं। जयस्तम्भ १२० फीट ऊँचा है। इसे राणा कुम्भा ने बनवाया था। इनके अतिरिक्त यहाँ और भी प्राचीन मन्दिर हैं। यहां से नीमच होता हुआ इन्दौर जावे।

इन्दौर

इन्दौर सम्भवत: १७१५ ई० में बसाया गया था। यह होल्कर राज्य की राजधानी थी। यहां की रानीं अहिल्याबाई जगत प्रसिद्ध है। खण्डेलवाल जैनियों की आबादी खासी है। स्टेशन से एक फर्लागं के फासले पर जंवरीबाग में रावराजा दानवीर सर-सेठ स्वरुपचन्द हुकुमचन्द जी की नसियाँ हैं। वहीं धर्मशाला है। एक विशाल एवं रमणीक जिन मन्दिर हैं। इसी धर्मशाला के

अन्दर की तरफ जैन बोर्डिंग और जैन महाविद्यालय भी है। इसके अतिरिक्त छावनी में दो, तुकोगंज में एक, दोतवरा में एक, और मल्हारगंज में एक मन्दिर है। सरसेठ जी के शीशमहल के मन्दिर जी में शीशे का काम दर्शनीय है। सेठ जी की ओर से यहाँ कई पारमार्थिक संस्थायें चल रही हैं। स्व० दानवीर सेठ कल्याण मल जी द्वारा स्थापित श्री तिलोकचन्द दि० जैन हाई स्कूल भी चल रहा है। यहाँ होल्कर कालिज राजमहल आदि स्थान देखने योग्य हैं। यहां से यात्री को मोरटक्का का टिकट लेना चाहिए। वहाँ धर्मशाला है और थोड़ी दूर रेवा नदी है, जिसे नाव द्वारा पार उतर कर सिद्धवरकूट जाना चाहिये।

सिद्धवरकूट

सिद्धवरकूट से दो चक्रवर्ती और दस कामदेव आदि साढ़े तीन करोड़ मुनि मोक्ष पधारे हैं। यहां एक कोट के अन्दर आठ दि० जैन मन्दिर और ४ धर्मशालायें हैं। प्रतिमायें अतीव मनोज्ञ हैं। एक मन्दिर जंगल में भी है। यहाँ का प्राकृतिक दृश्य अत्यन्त सुन्दर और शांत है। क्षेत्र के एक तरफ नर्मदा है, दूसरी तरफ जंगल और पहाड़ियाँ हैं। कितनी सुन्दर तपोभूमि है। यहाँ सिद्धवरकूट के पास ही हिन्दुओं का बड़ा तीर्थ ओंकारेश्वर है। यहां से मोटर इक्का द्वारा जाना चाहिए और वहां से सनावंद स्टेशन जाना चाहिए।

ऊन (पावागिरि)

सनावद से मोटर द्वारा खरगौन जाना चाहिए। खरगौन से ऊन (पावागिरि) क्षेत्र दो मील है। यह प्राचीन अतिशय क्षेत्र पावागिरि नाम से हाल ही में प्रसिद्ध हुआ है। यहां एक धर्मशाला और श्राविकाश्रम और एक धर्मशाला में एक नया मन्दिर भी बनवाया गया है। नया मंदिर बड़वाह की दानशील केशरबाई ने

बनवाया है। कहते हैं, यहां बल्जाल नामक एक राजा ने ९९ मंदिर, ९९ बावड़ी और ९९ सरोवर बनवाये थे। यहां बहुत से मंदिर और मूर्तियाँ जमीन से निकली हैं, जो दर्शनीय हैं और मालवा के उदयादित्य राजा के समय के बने हूए हैं। पुराने जमाने में यहां एक विद्यालय भी था। पाषाण पर स्वर-व्यंजन अङ्कित है। इनमें से कुछ का जीर्णोद्धार लाखों रुपये खर्च करके किया गया है। कई मंदिर बहुत ही टूटी अवस्था में हैं और उनका जीर्णोद्धार होने की आवश्यकता है। यहां के दर्शन कर लारी से बड़-वानी जाना चाहिए।

बड़वानी—चूलगिरि (बावनगजा)

बड़वानी एक सुन्दर व्यापारिक नगर है। यहाँ एक बड़ा भारी दि० जैन मन्दिर है। एक पाठशाला और दो धर्मशालायें हैं। बड़वानी का प्राचीन नाम सिद्ध नगर सिद्धनाथ के विशाल मन्दिर के कारण प्रसिद्ध था। यह मन्दिर मूलतः जैनियों का है, परन्तु अब हिन्दुओं ने उसमें महादेव की स्थापना कर रक्खी है।

बड़वानी से दक्षिण की ओर थोड़ी दूर पर चूलगिरि नामक पर्वत है। यहाँ से इन्द्रजीत और कुम्भकरण मोक्ष गए हैं। यहां पर दो दिगम्बर जैन मन्दिर और दो धर्मशालायें हैं। यह मन्दिर बड़े रमणीक हैं। एक मन्दिर में एक बावनगजा जी की खड्गा-सन प्रतिमा महा मनोहर, शान्तिप्रद और और अनूठी है। यह पहाड़ में उत्कीर्ण हुई ८४ फीट ऊँची है और श्री ऋषभदेव जी की है। किन्तु कुछ लोग उसे कुम्भकरण की बताते हैं। उसी के पास एक ९ गज की प्रतिमा इन्द्रजीत की है। इन दोनों प्रतिमाओं के दर्शन से चित्त प्रसन्न होता है। पहाड़ पर कुल २२ मन्दिर और एक चैत्यालय हैं। बड़वानी में जैन बोर्डिंग भी है। यहाँ से मऊ छावनी आकर उज्जैन जाना चाहिए।

यहां १३ वीं शताब्दी की मूर्तियां पाई जाती हैं, संवत् १२२३, १२५८ और १३८० के मूर्तिलेख वाली प्रतिमाएँ हैं। इससे स्पष्ट हैं कि यह क्षेत्र १३ वी शताब्दी में प्रसिद्ध था। उस समय मन्दिरों का जीर्णोद्धार का कार्य भी हुआ था।

उज्जैन

उज्जैन एक ऐतिहासिक स्थान है। पूर्व काल में यह जैनियो का केन्द्र था। उज्जैन प्राचीन अतिशय क्षेत्र है। यहाँ की श्मशान भूमि में अन्तिम तीर्थङ्कर भ० महावीर ने तपस्या की थी—यहीं पर रुद्र ने उन पर घोर उपसर्ग किया था। उपरान्त सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य्य की उप राजधानी भी रहा। श्रुतकेवली भद्रबाहु जी इस भूमि में विचरे थे। और यहीं उन्होंने १२ वर्ष के अकाल की भविष्यवाणी की थी। प्रसिद्ध सम्राट विक्रमादित्य की लीला भूमि भी यही थी। आज यहाँ बहुत से प्राचीन खंडहर पड़े हुए हैं। स्टेशन से दो मील दूर नमक मंडी में जन धर्मशाला और मन्दिर हैं। दूसरा मंदिर नयापुरा में है। एक मंदिर रफीगंज में हैं और एक मंदिर जयसिंह पुरा में है। वहां जयसिंहपुरा मंदिर में पं० सत्यन्धरकुमारजी सेठी ने प्राचीन मूर्तियों का अच्छा संग्रह किया है। आकाशलोचनादिक देखने योग्य स्थान हैं यहां से यात्री को भोपाल ब्रांच लाइन में मकसी स्टेशन जाना चाहिए।

मकसी पार्श्वनाथ

स्टेशन के पास ही धर्मशाला है, जहां से एक मील दूर कल्याणपुर नामक ग्राम हैं। यहां दो दि० जैन मंदिर और धर्मशाला हैं जिनमें कई प्रतिमायें मनोज्ञ हैं। बडा जैन मंदिर जो पहले दिगम्बरियों का था, अब उस पर दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों का अधिकार है। सुबह ९ बजे तक दि० जैनी पूजन करते हैं। दर्शन हर वक्त किये जाते हैं। इस मंदिर में मूलनायक श्री

पार्श्वनाथ स्वामी की ढाई फीट ऊँची श्याम पाषाण की अतिशय-युक्त चतुर्थ कालकी महामनोज्ञ प्रतिमा विराजमान है। इस प्रतिमा के कारण ही यह अतिशय क्षेत्र प्रसिद्ध है। इस मंदिर के चारों ओर ५२ देवरी और बनीं हुई हैं, जिनमें ५२ दि० जैन प्रतिमायें मूलसंघी शाह जीवराज पापड़ीवाल द्वारा प्रतिष्ठित विराजमान हैं। यहां के दर्शन करके भोपाल जावे।

भोपाल

यह मध्य प्रदेश की राजधानी है। यहाँ चौक बाजारके पास जैन धर्मशाला है। यहाँ एक दि० जैन मंदिर और एक चैत्यालय है। यहाँ से कुछ मील दूर जंगल में बहुत सी जैन प्रतिमाएँ पड़ी हुई हैं। उनकी रक्षा होनी चाहिये। एक बड़ी खड्गासन सुन्दर प्रतिमा एक मकान में विराजमान करा दी गई हैं। यहां दर्शनीय स्थानों में प्रसिद्ध तालाब तथा नबाबी इमारतों को देखकर इटारसी होता हुआ नागपुर अकोला आवे।

श्री अन्तरिक्ष पार्श्वनाथ

श्री अन्तरिक्ष पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र अकोला स्टेशन (मध्य रेलवे) से ४४ मील दूर शिरपुर ग्राम के पास है। शिरपुर में दो दि० जैन मन्दिर हैं, जिसमें एक बहुत पुराना है। उसके भौहरे में २६ दि० जैन प्रतिमायें विराजमान हैं। इसके सिवा चार नशियाँ भी दि० आम्नाय की हैं। यहां मूलनायक प्रतिमा श्री अन्तरिक्ष पार्श्वनाथ की चतुर्थ काल की है। यह प्रतिमा अनुमानतः २॥ फीट ऊँची, अधर जमीन से एक अंगुल आकाश में विराजित है। इस मन्दिर का निर्माण १००० वर्ष पूर्व राजा श्रीपाल ने कराया था। यह मन्दिर तीन मंजिल का है।

नागपुर

स्टेशन से एक मील दूर जैन धर्मशाला में ठहरें। यहाँ कुल

१२ दि० जैन मन्दिर हैं। अजायबघर, चिड़ियाघर, मिल आदि देखने योग्य स्थान हैं। यहाँ से कारंजा होकर ऐलिचपुर जाना चाहिए। ऐलिचपुर जिन मन्दिर हैं। ऐलिचपुर और परतवाड़ा से मुक्तागिरि आठ मील है।

मुक्तागिरि

यहाँ तलहटी में एक जैन धर्मशाला और एक मन्दिर है। यहाँ का प्राकृतिक सौन्दर्य अपूर्व है। तलहटी से एक मील की चढ़ाई है। पहाड़ पर सीढ़ियां बनी हुई हैं। कहते हैं कि इस स्थान पर मेंढ़ देव ने बहुत से मोतियों की वर्षा की थी, इसलिए इसका नाम मुक्तागिरि पड़ा है। वर्षा स्थल ४० वें मन्दिर के पास है परन्तु यह ज्यादा उपयुक्त है कि निर्वाण क्षेत्र होने के कारण यह मुक्तागिरि कहलाया। पर्वत पर कुल ५२ मन्दिर अति मनोज्ञ हैं। अधिकाँश मंदिर प्रायः १५ वीं शताब्दी के या बाद के बने हुये है। अचलापुरी के एक ताम्रपत्र में इस पवित्र स्थान पर सम्राट श्रेणिक बिम्बसार द्वारा गुफा मन्दिर बनवाने का उल्लेख है। यहां ४० वें नम्बर का मन्दिर पर्वत के गर्भमें खुदा हुआ प्राचीन है। वही मन्दिर 'मेंढ़गिरि' नाम से प्रसिद्ध है, इसमें नक्काशी का काम बहुत अच्छा है। स्तम्भों और छत की रचना अपूर्व है। श्री शान्तिनाथ जी की प्रतिमा दर्शनीय हैं। इस मंदिर के समीप लगभग २०० फीट की ऊँचाई से पानी की धारा पड़ती है, जिससे एक रमणीय जलप्रपात बन गया है। यहाँ के जलप्रपातों के कारण यह क्षेत्र रमणीय दिखता है। पार्श्वनाथ भगवान का नं० १ का मन्दिर भी प्राचीन और दर्शनीय शिल्प का नमूना है। यह प्रतिमा सप्तफण-मंडित प्राचीन है। इस पर्वत से साढ़े तीन करोड़ मुनि मुक्ति पधारे हैं। यहाँ पर निरन्तर केशर की वर्षा होती थी ऐसा कहते हैं। यहाँ से अमरावती होकर भातकुली जावे। अमरावती में १४ मन्दिर व २२ चैत्यालय हैं।

भातकुली

अमरावती से भातकुली दस मील दूर है। यह अतिशय क्षेत्र केशरिया जी की तरह प्रभावशाली है। यहाँ ३ दि० जैन मन्दिर व दो चैत्यालय हैं। श्री ऋषभनाथ जी की प्रतिमा मनोज्ञ हैं। यहां से अमरावती और कामठी होकर रामटेक जावे।

रामटेक

स्टेशन से डेढ़ मील के फासले पर जैन धर्मशाला है। शहर से एक मील दूर जंगल में अत्यन्त रमणीक मंदिरों का समूह है। कुल दस मन्दिर हैं। उनमें दो मन्दिर दर्शनीय और भारी लागत के हैं, इनमें हाथी घोड़ा आदि की मूर्तियां वनी हुई हैं। इनमें एक मन्दिर में १८ फीट ऊँची कायोत्सर्ग पीले पाषाण की श्री शान्ति-नाथ जी की प्रतिमा अति मनोज्ञ है। अन्य मंदिर प्रायः सं० १६०२ के बने हुये हैं। कहते हैं कि श्री अप्पा साहब भोंसला के राज़मंत्री वर्धमान सावजी श्रावक थे। एक दिन राजा रामटेक आये। उन्होंने रामचन्द्र जी के दर्शन करके भोजन किये, परन्तु मंत्री वर्धमान ने भोजन नही किए, क्योंकि तब तक उन्होंने देव दर्शन नही किये थे। इस पर राजा ने जैन मंदिर का पता लगवाया, तो जंगल के मध्य झाड़ियों से ढ़की हुई एक तीर्थंकर मूर्ति का पता चला। मंत्री जी ने दर्शन करके आनन्द मनाया और यहाँ पर कई मंदिर बनवाये। यहाँ पर श्री रामचन्द्र जी का शुभागमन हुआ था। यहाँ से छिंदवाड़ा होकर सिवनी जावे।

सिवनी

सिवनी परवार जैनियों का केन्द्र स्थान है। यहाँ २१ मंदिर तालाब के किनारे बने हुये हैं। यहाँ का चांदी का रथ दर्शनीय है। एक श्राविकाश्रम हैं। यहाँ से जबलपुर जावे।

जबलपुर

जबलपुर भी परवार जैनियों का प्रमुख केन्द्र है। यहां

लार्डगंज की धर्मशाला में ठहरें। यहाँ ४६ दि० जैन मंदिर और तीन चैत्यालय हैं। एक लायब्रेरी और बोर्डिंग हाउस भी है। यहाँ से कुछ दूर पर नर्मदा नदी में धुआंधार नामक स्थान देखने योग्य हैं। बहुरीबन्द क्षेत्र में श्री शान्तिनाथ जी की १२ फीट ऊँची मूर्ति दर्शनीय हैं। सिहोरा रोड़ (मध्य रेलवे) से यह १८ मील है। वैसे जबलपुर से करेली स्टेशन जावे। यहां से मोटर लारी द्वारा बड़ी देवरी होकर श्री वीना जी पहुंचे।

श्री वीना जी

यहां एक छोटी सी धर्मशाला और तीन शिखरबन्द मंदिर हैं। इनमें सबसे पुराना मन्दिर मूलनायक श्री शान्तिनाथ जी का है, जिसमें उपर्युक्त प्रतिमा १४ फीट अवगाहना की अद्वितीय शान्त मुद्रा को लिए हुए खड्गासन विराजमान हैं। यह प्रतिमा संभवतः १२ वीं शताब्दी की अतिशययुक्त है। दूसरे मन्दिर में श्यामवर्ण १२ फीट अवगाहना की श्री वर्द्धमान स्वामी की प्रतिमा अत्यन्त मनोज्ञ है। यहाँ से देवरी होकर सागर जावे।

सागर

स्टेशन से लगभग एक मील दूर धर्मशाला है। यहाँ ३० दि० जैन मन्दिर हैं। गणेश दि० जैन महाविद्यालय एवं अन्य संस्थायें है। यहां ५-६ मील लम्बा चौड़ा ताल है। यहां से द्रोणगिरि जावे।

द्रोणगिरि

यह सेंदप्पा ग्राम के पास है। सेंदप्पा में एक मन्दिर और द्रोणगिरि में २४ दिगम्बर जैन मन्दिर हैं। मूलनायक श्री आदि-नाथ स्वामी की प्रतिमा सं० १५४९ की प्रतिष्ठित है। कुल प्रतिमायें ६० है। इस पर्वत से श्री गुरुदत्तादि मुनिवर मोक्ष गये हैं। पर्वत के दोनों ओर चन्द्राक्षा और श्यामरी नामक नदियां

बहतीं हैं। पर्वत के पास एक गुफा है—वहीं निर्वाण स्थान बताया जाता है। यहां से नैनागिरि जावे।

नैनागिरि (रेशिंदीगिरि)

नैनागिरि गांव से पर्वत दो फरलाङ्ग दूर है। यहाँ एक शिखर बन्द दि० जैन मन्दिर पर्वत के शिखर पर और ६ मन्दिर नीचे हैं। एक धर्मशाला है। यहां पर भ० पार्श्वनाथ का समवशरण आया था और यहां से वरदत्तादि मुनिगण मोक्ष पधारे हैं। सबके पुराना मन्दिर १७ वीं शताब्दी का बना हुआ है। वहाँ पार्श्वनाथ की विशाल मूर्ति विराजमान की गई है जो कलात्मक और दर्शनीय है। सं० १९२५ में इस क्षेत्र का जीर्णोद्धार स्व० चौधरी श्यामलाल जी ने कराया था। सन् १८८६ में यहां पर एक लाख जैनीएकत्रित हुये थे। यहाँ से खजुराहो जावे।

खजुराहो अतिशय क्षेत्र

यहां प्राचीन २५ मन्दिर हैं, जिनमें अतीव मनोज्ञ प्रतिमाये विराजमान हैं। मन्दिरों की लागत करोड़ों रुपयों की अनुमान की जाती है। शिलालेखों में इसका नाम 'खजूरबाहक' हैखजूरपुरके नाम से भी खजुराहा प्रसिद्ध था। कहते हैं कि नगरकोट के द्वार पर सुवर्णरंग के दो खजूर के वृक्ष थे। उन्हीं के कारण वह खजूरपुर अथवा खजुराहा कहलाता था। यह नगर बुन्देलखण्ड की राजधानी था औज चन्देल वंश के राजाओं के समय में चरमोन्नति पर था। उसी समय के बने हुए यहां अनेक नयनाभिराम मन्दिर और मूर्तियाँ हैं। जैन मन्दिरों में जिननाथ जी का मन्दिर चित को विशेष रीति से आकर्षित करता है। इस मन्दिर को सन् ९५४ ई० में पाहिल नामक महानुभाव ने दान दिया था। इस मन्दिर के मण्डपों की छत में शिल्पकारी का अद्भुत काम दर्शनीय है। कारीगर ने अपने

शिल्प चातुर्य का कमाल यहाँ कर दिखाया है। मण्डपों से खंभों पर बने हुए चित्र दर्शकों को मुग्ध कर लेते हैं। इसका जीर्णोद्वार हो गया है। पहले यहाँ यात्रा करने राजा महाराजा सब ही लोग आते थे। श्री शाँतिनाथ जी की एक प्रतिमा १२ फीट ऊंची अति मनोज्ञ है। हजारों प्रतिमायें खण्डित पड़ी हुई हैं। यहाँ के दर्शन करके वापस सागर आवे। यहाँ से वीना ज० होकर जाखलौन जावे।

श्री देवगढ़ अतिशय क्षेत्र

मध्य रेलवे की दिल्ली-वम्बई लाईन पर ललितपुर स्टेशन से २० मील दूर देवगढ़ अतिशय क्षेत्र हैं। ग्राम में नदी किनारे धर्मशाला है। वहाँ से पहाड़ एक मील है। पहाड़ के पास एक बावड़ी है, इसमें सामग्री धो लेनी चाहिए। पहाड़ पर एक विशाल कोट के अन्दर अनेक मंदिर और मूर्तियाँहैं। चालीस मन्दिर प्राचीन लाखों रुपयों की लागत के बने हैं और १९ मान स्तम्भ, कहते हैं कि इन मन्दिरों को श्री पाराशाह और उनके दो भाई देवपत और खेवपत ने बनवाया था, परन्तु कुछ मंदिर उनके समय से प्राचीन है श्री शांतिनाथ जी की विशालकाय प्रतिमा दर्शनीय है। यह स्थान उत्तर भारत की जैनबद्री समझना चाहिये यहाँ के मन्दिर मूर्तियाँ–स्तम्भ और शिलापट अपूर्व शिलपकला के नमूने हैं। यहां पंच परमेष्ठी, देवियों, तीर्थंकर की माता आदि की मूर्तियां तो ऐसी हैं जो अन्यत्र नही पाई जाती ! यहां गुप्तकाल की भी मूर्तियाँ है। एक सिद्ध गुफा' नामक गुफा प्राचीन है। यहाँ के मन्दिरों का जीर्णोद्वार होने की बड़ी आवश्यकता है। आगरे के सेठ पदम राज वैनाडा ने बिखरी हुई मूर्तियों को एक दीवार में लगवा कर परिकोट बनवाया था। सन् १९३९ में यहां खुरई के सेठ गणपत लाल गुरहा ने गजराथ चलाया था। वापस जाखलौन होकर ललितपुर जावे।

ललितपुर

यहां क्षेत्र की जैन धर्मशाला में ठहरे। यहाँ एक कोट के अन्दर पांच मंदिर बड़े रमणीक बने हुये हैं। उनमें अभिनन्दन नाथ की प्रतिमा बड़ी मनोज्ञ है। यहां भोंयरे में भी मन्दिर है। यहां के क्षेत्रपाल के अतिशय बहुत प्रसिद्ध हैं। शहर में भी पंचायती प्राचीन मंदिर है। जिसमें हस्तलिखित ग्रन्थों का अच्छा संग्रह है। पाठशाला भी है। यहां मोटर से चंदेरी जावे।

चन्देरी

ललितपुर से चंदेरी बीस मील दूर हैं। यहाँ तीन महामनोज्ञ मंदिर हैं। यहाँ एक मंदिर में अलग-अलग चौबीस तीर्थङ्करों की अतिशययुक्त प्रतिमायें विराजमान हैं। इन प्रतिमाओं की यह विशेषता है कि जिस तीर्थङ्कर के शरीर का जो वर्ण था वही वर्ण उनकी प्रतिमा का है ऐसी प्रतिमायें अन्यत्र कहीं देखने को नही मिलती। इस चौबीसी को सं० १८९३ मे सवाई चौधरी फौजदार हिरदेसाह फतहसिंह के कामदार सभासिह जी ने न्र्मािण कराया था। उसकी पत्नी का नाम कमला था। श्री हजारीलाल जी वकील के प्रयत्न से इस क्षेत्र का उद्धार हो रहा है। हजारों दर्शनीय प्रतिमायें संग्रहीत हैं और शास्त्रों का संग्रह भी किया गया है। यह स्थान अतिशय क्षेत्र रुप में प्रसिद्ध है। किले में भी जैन मूर्तियाँ १२वीं १३वीं शताब्दी की हैं। यहाँ के मन्दिर में अच्छा शास्त्र भण्डार भी है।

खन्दार जी

चंदेरी से एक मील की दूरी पर खन्दारजी नामक पहाड़ी है। खन्दार नाम पड़ने का कारण यह है कि इस पहाड़ी की कन्दराओं (गुफाओं) में पत्थर काटकर मूर्तियां बनाई गई हैं जिनका निर्माण काल तेरहवीं शताब्दी से सत्रहवीं शताब्दी तक

है। एक मूर्ति २५ फीट ऊँची हैं।

यह सब ही मूर्तियां पुरातत्व एवं कला की दृष्टि से विशेष महत्व रखती है यहां भट्टारक कमलकीर्ति तथा पद्मकीर्ति के स्मारक वि० सं० १७१७ और १७३६ के हैं किन्तु परमानन्द शास्त्री ने भ० पद्मकीर्ति की चरण-पादुका पर निम्न प्रकार का लेख पढ़ा है: "सं० ११११३ मार्गशीर्ष चतुर्दश्याँ बुधवासरे भट्टारक श्री पद्मकीर्ति देवा वलादागत तेषां सिधपादुका युग्लम्।"

बूढ़ी चन्देरी

वर्तमान चन्देरी से ९ मील दूर बूढ़ी चन्देरी है। मार्ग सुगम है। वहां पर अति प्राचीन अतिशययुक्त मनोज्ञ अष्ट प्रातिहार्ययुक्त सैकड़ों जिन विम्ब हैं। कला एवं वीतरागता की दृष्टि से ये मूर्तियां अपना अद्वितीय स्थान रखतीं हैं। किन्हीं-किन्हीं मूर्तियों की बनावट भी महत्वपूर्ण है। प्रत्येक मंदिर की छत केवल एक पत्थर की बनी हुई है। किसी-किसी शिला का परिमाण १०० मन से भी अधिक है। इन मंदिरों व मूर्तियों के निर्माणकाल का तो कोई लिखित आधार उपलब्ध नही हुआ है, हां, यह अवश्य है कि ११ वीं शताब्दी में प्रतिहार वंशीय राजा कीर्तिपाल ने इस चन्देरी को वीरान करके वर्तमान चंदेरी स्थापित की। इस क्षेत्र के जीर्णोद्धार का कार्य दि० जैन एसो० चंदेरी द्वारा सं० २००१ में प्रारम्भ हुआ। दो वर्ष में कोई शिला लेख प्राप्त नही हुआ। सैकड़ो मूर्तियां जो यत्र तत्र बिखरी पड़ी थीं अथवा भूमि के गर्भ में थी, पत्थरों एवं चट्टानों के नीचे दबी पड़ी थीं उनको एकत्रित करके संग्रहालय में रखा गया है। कई मन्दिरों का जीर्णोद्धार हो चुका है। धर्मशाला बनवाई जा चुकी है तथा बावड़ी भी खुदवाई जा चुकी है।

थूबोनजी

चंदेरी से ९ मील की दूरी पर थूबोनजी क्षेत्र है। इसका

प्राचीन नाम "तपोवन" है जो अपभ्रंश होकर थोवन बन गया है। यहाँ २५ दिगम्बर जैन मंदिर हैं, सबसे प्राचीन मंदिर पाड़ा-शाह का बनवाया है जो सोहलवीं शताब्दी का है। एक मंदिर में भगवान आदिनाथ जी की प्रतिमा लगभग २५ फीट ऊँची है।

टीकमगढ़

ललितपुर से मोटर द्वारा टीकमगढ़ जावे। यहां मन्दिरों के दर्शन कर अन्तरात्मा को पवित्र करना चाहिए। यहाँ से पपौरा जावे।

पपौरा जी

टीकमगढ़ से ३ मील पपौरा जी तीर्थ स्थान है। यहां ८६ विशाल दिगम्बर जैन मन्दिर हैं। एक मन्दिर में सात गज ऊँची प्रतिमा विराजमान है। सबसे प्राचीन मन्दिर भोंहरे का है, जो सं० १२०२ विक्रमाब्द में प्रसिद्ध चंदेलवंशीय राजा मदनवर्म्मदेव के समय का बना हुआ है। कार्तिक सुदी १४ को हर साल मेला होता है। वापस टीकमगढ़ आवे।

अहार जी

टीकमगढ़ से पूर्व की ओर १२ मील अहार नामक अतिश-यक्षेत्र है। इस क्षेत्र के विषय में यह किम्बदन्ती प्रसिद्ध हैं कि पुराने जमाने में पाड़ाशाह नामक धनवान जैनी व्यापारी थे। उन्हें जिनदर्शन करके भोजन करने की प्रतिज्ञा थी। एक दिन वह उस तालाब के पास पहुंचे जहाँ आज अहार के मन्दिर हैं। उस स्थान पर उन्होंने ड़ेरे डाले, परन्तु जिनदर्शन न हुये। पाड़ाशाह उपवास करने को तैयार हुये कि इतने में एक मुनिराज का शुभागमन हुआ। सेठजी ने भक्तिपूर्वक उनको आहार देकर स्वयं आहार किया। इस अतिशयपूर्ण स्मृति को सुरक्षित रखने के लिए और स्थान की रमणीकता को पवित्र बनाने के लिए उन्होंने वहां एक

जिन मंदिर निर्माण कराना निश्चित किया। इत्तफाक से वे ललित-पुर से जो रांगा भर कर लाए थे, वह चाँदी हो गया। सेठ जी ने यह चमत्कार देखकर उस सारी चाँदी को यहां जिन मंदिर बनवाने में खर्च कर दिया। तभी से यह क्षेत्र ग्रहारजी के नाम से प्रसिद्ध है। वैसे यहां पर दसवीं शताब्दी तक के शिलालेख बताये जाते हैं। मालूम होता हैं कि पाड़ाशाह जी ने पुरातन तीर्थ का जीर्णोद्धार करके इसकी प्रसिद्धी की थी। वर्तमान में यहाँ चार जिनालय अवशेष है। मुख्य जिनालय में १८ फीट ऊँची श्री शांतिनाथ जी की सौम्यमूर्ति विराजमान है। सं० १२३७ मगसिर सुदी ३ शुक्रवार को इस मूर्ति की प्रतिष्ठा गृहपतिवंश के सेठ जाहड़ के भाईयों ने कराई थी। उनके पूर्वजों ने वाणपुर में सहस्र-कूट जिनालय भी स्थापित किया था, जो अब भी मौजूद हैं। यहां और भी अगणित जिन प्रतिमायें बिखरी हुई मिलती है, जो इस तीर्थ के महत्व को स्थापित करती हैं।

श्री शान्तिनाथ जी की मनोज्ञ मूर्ति के अतिरिक्त यहाँ पर ग्यारह फुट ऊँची खड्गासन प्रतिमा श्री कुन्थुनाथ भगवान की भी विद्यमान है। यहां प्रचुर परिमाण में अनेक प्राचीन शिलालेख उपलब्ध है जिन से जैनधर्म और जैन जातियों का महत्व तथा प्राचीनता प्रकट होती है। प्राचीन जिन मंदिरों की २५० मूर्तियां यहाँ उपलब्ध हैं। यहां विक्रम सं० १९९३ से श्री शान्तिनाथ दिगम्बर जैन विद्यालय मय बोर्डिंग के चालू है। ललितपुर (मध्य रेलवे) स्टेशन से मोटर द्वारा ३६ मील टीकमगढ़ होकर अहार जी पहुंचना चाहिये अथवा मऊरानीपुर स्टेशन से ४२ मील मोटर द्वारा टीकमगढ़ से अहार जी पहुंचना चाहिये।

श्री अतिशयक्षेत्र कुण्डलपुर

दमोह से करीब २० मील ईशानकोण में कुण्डलपुर अतिशय

क्षेत्र है। वहां के पर्वत का आकार कुण्डलरुप है, इसी कारण इसका नाम कुण्डलपुर पड़ा अनुमान किया जाता है। यहां पर्वत पर और तलहटी में कुल ५८ मंदिर हैं। इन मंदिरों में मुख्य मंदिर श्री महावीर स्वामी का है, जिसमें उनकी ४-४।। गज ऊँची और प्राचीन प्रतिमा विराजमान है। यह मंदिर प्रतिमा जी से बाद का सं० १९५७ का बना हुआ है इस स्थान का जीर्णोद्धार महाराजा छत्रसाल जी के समय में ब्र० नेमिसागर जी के प्रयत्न से हुआ था यह बात सं० १७५७ के शिलालेख से स्पष्ट है। इस शिलालेख में महाराज छत्रपाल को 'जिनधर्ममहिमायाँ रतिभूतचेतस:' व 'देवगुरुशास्त्रपूजनतत्पर:' लिखा है, जिससे उनका जैन धर्म के प्रति सौहार्द्र प्रगट होता हैं। इस क्षेत्र के विषय में यह किम्बदन्ती प्रसिद्ध है कि श्री महेन्द्रकीर्ति जीं भट्टारक घूमते हुए इस पर्वत की ओर निकल आये। वे पटेरा ग्राम में ठहरे, परन्तु उन्हें जिन दर्शन नही हुए—इसीलिए वह निराहार रहे। रात को स्वप्न में उन्हें कुण्डलपुर पर्वत के मंदिरों का परिचय प्राप्त हुआ। प्रात: एक भील के सहयोग से उन्होंने इन प्राचीन मंदिरों का पता लगाया और दर्शन करके अपने भाग्य को सराहा एवं इस तीर्थ को प्रसिद्ध किया। इसका सम्पर्क भ० महावीर से प्रतीत होता है। संभव है कि भ० महावीर का समवशरण यहाँ आया हो। कहते हैं कि जब महमूदगजनवी मंदिर और मूर्तियों को तोड़ता हुआ यहाँ आया और महावीर जी की मूर्ति पर प्रहार किया तो उसमें से दुग्ध-धारा निकलती देखकर चकित हो, रह गया। कहते हैं कि महाराज छत्रसाल ने भी इस मंदिर और मूर्ति के दर्शन करके जैन धर्म में श्रद्धा प्रगट की थी। उन्होंने इस क्षेत्र का जीर्णोद्धार कराया उनके चढ़ाए हुए बर्तन वगैरह आज भी मोजूद बताये आते हैं, जिनपर उनका नाम खुदा हुआ है। महावीर जयन्ती को मेला भरता है।

निवाई या नवागढ़

यह बुन्देलखण्ड का एक प्राचीन अतिशय क्षेत्र है। यह झांसी प्रदेशान्तर्गत ललितपुर तहसील महरौनी से पूर्व की ओर १३ मील की दूरी पर सुरम्य पहाड़ी के निर्जन स्थान में स्थित है। उपलब्ध मूर्तियों व लेखों से यह स्पष्ट जान पड़ता है कि १२ वीं १३ वीं शताब्दियों में यह क्षेत्र समृद्धि को प्राप्त हुआ था।

श्री पं० परमानन्द जी का कहना है कि इस क्षेत्र पर अनेक ऐसी घटनायें घटित हुई हैं जिन से यह अतिशय क्षेत्र कहलाया। कुछ समय पूर्व सांपौन ग्राम निवासी हलकूराम नाम के व्यक्ति को उन्माद रोग हो गया था, उस रोग ने अपना भयंकर रूप धारण कर लिया। वह उस अवस्था में नग्न ही इधर-उधर फिरता था। कुछ समय बाद वह नवाई आ गया और उसने उस क्षेत्र के चारों ओर चक्कर लगाना प्रारम्भ किया। पश्चात् पुण्योदय से भोंयरे में स्थित श्री अरहनाथ की प्रशांत मूर्ति का दर्शन हुआ। दर्शन करते ही उसका वह भयंकर रोग चला गया। इससे उसके चित्त में उस मूर्ति का दर्शन करने और वहीं रहने का निश्चय हो गया और वह वहीं पर रहने लगा। उसने जल यात्रा महोत्सव भी करवाया था और शेष जीवन उस क्षेत्र का अतिशय व्यक्त करते हुए सफल बनाया था।

यहाँ पुरातत्व की बहुत सामग्री बिखरी पड़ी है। उसे सुरक्षित करने के लिए संग्रहालय का निर्माण भी किया गया है। यहाँ एक जीर्ण पुरानी दीवाल को निकालते समय सं० ११९६ की प्रतिष्ठित खण्डित मूर्ति मिली।

पवाजी

यह उत्तर प्रदेश में स्थित झाँसी जिला मंडलान्तर्गत ललित-पुर तहसील का एक छोटा सा ग्राम है। झाँसी से २६ मील और

ललितपुर से ३७ मील, बसई और तालवेहट जो मध्य रेलवे का स्टेशन है, यहां से आठ या नौ मील की दूरी पर है। किसी समय इसे भी जैन संस्कृति का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। मूल भोंयरे से पवा गांव तीन फर्लांग के लगभग दूर होगा। यहाँ १३ वीं १४ वीं शताब्दी की प्रतिष्ठित मनोज्ञ मूर्तियाँ उपलब्ध होतीं हैं। यदि अन्वषण किया जाय तो वहाँ आस-पास की पहाड़ियों पर या टीलों की खुदाई में जैन संस्कृति को कुछ वस्तुयें प्राप्त हो सकती हैं। परन्तु पं० परमानन्द जी की मान्यता हैं कि यह पवा कोई सिद्ध क्षेत्र नहीं हैं, और न इसका साधक कोई पुरातन प्रमाण ही ही उपलब्ध है। केवल १३ वीं १४ वीं शताब्दी की मूर्तियां इसे सिद्ध क्षेत्र सिद्ध करने में समर्थ नही है। सिद्ध क्षेत्रों में इसका कोई उल्लेख भी नही हैं। यहां क्या कुछ अतिशय विशेष कब और किसके कारण प्रकट हुआ, इसका कोई प्रमाणिक उल्लेख नही हैं। निर्वाण काण्ड और निर्वाण भक्तियों और तीर्थ यात्रा प्रबन्धों में इसे कहीं सिद्ध क्षेत्र नहीं लिखा। ऐसी स्थिति में इसे सिद्ध क्षेत्र बतलाना भूल से खाली नही है। किन्तु इसके विपरीत श्री सागर-मल जी वैद्य "सागर" इसे पावागिरि अनुमान करते हैं।

अतिशय क्षेत्र पचराई

पचराई खनियाधाना स्टेट में है। यह खनियाधाने से एक या डेढ़ मील के फासले पर अवस्थित हैं। यहां २८ मन्दिर हैं। इसे भी अतिशय क्षेत्र बतलाया जाता है। ग्वालियर और झांसी जिले के आस-पास का प्रायः सारा इलाका किसी समय जैन धर्म और जैन संस्कृति का केन्द्र रहा है। खनियाधाना और ग्वालियर स्टेट का जैन पुरातत्व, जैन मूर्तियां और मन्दिरों के खण्डहर इस बात के द्योतक हैं कि १२ वीं १३ वीं शताब्दी में यह स्थान जन-धन से समृद्ध था। यहां का भ० शांतिनाथ का मन्दिर बहुत प्रसिद्ध है और वह १२ वी शताब्दी के प्रारम्भ काल में बनाया गया था,

जैसा कि सं० ११११२ के १४ पंक्त्यात्मक एक लेख से स्पष्ट है। इस मन्दिर की उक्त संवत् में पौरपट्ट (परवार) वंश में समुत्पन्न साहु महेश्वर के पुत्र शाह धर्म ने प्रतिष्ठा करवाई थी। यहां और भी अनेक मूर्तियां हैं, उनमें संवत् १२३२ और १३४५ की प्रतिष्ठित हैं। इस क्षेत्र का प्राचीन इतिहास भी संकलित होना आवश्यक है। श्रावक शिरोमणि श्री साहू शान्ति प्रसाद जी द्वारा इसका जीर्णोद्धार कराया गया है।

अतिशय क्षेत्र सिरौन

झांसी जिलान्तर्गत बम्बई रेलवे लाईन पर जखौरा स्टेशन से १२ मील की दूरी पर 'सिरौन' नाम का ग्राम बसा हुआ है। गांव में एक शिखरबन्द मन्दिर है। गांव से थोड़ी दूर पर एक खण्डहर में ४-५ मन्दिरों का समूह हैं, जिनमें से एक बड़ा मन्दिर और चार छोटे मन्दिर हैं। बड़े मन्दिर की वेदी दो फुट ऊँची है, जिस पर तीन-तीन श्याम वर्ण पाषाण की शान्तिनाथ भगवान की मूर्तियां विरांजमान हैं। दूसरे मन्दिर में भी श्यामवर्ण पाषाण की दो प्रतिमायें विराजमान हैं, जिनके आगे इन्द्र बने हुए हैं। तीसरा मन्दिर छोटा सा है परन्तु उसके भीतर १६ फुट ऊँची खड्गासन शान्तिनाथ भगवान की दीवाल से सटों हुई दिव्य विशाल मूर्ति विराजमान है। इस मूर्ति के दायँ बाएं तीन—तीन फुट की ऊँची खड्गासन प्रतिमायें विरामान हैं और उनके ऊपर दोनों आर दो—दो फुट ऊँची प्रतिमायें भी हैं।

चौथे मन्दिर के मध्य का प्रांगण गुम्बजदार है उसकी वेदी में ४ फुट ऊँची दो पद्मासन मूर्तिया विराजमान हैं और दीवालों पर चारों ओर मूर्तियाँ उत्कीर्णित हैं।

पांचवें मन्दिर जी में एक पद्मासन मूर्ति दो फुट की और दूसरी खड्गासन डेढ़ फुट की प्रतिष्ठित हैं। इनके सिवाय आंगन

में बहुत सी खण्डित प्रतिमायें विराजमान हैं जिनमें १०० के लगभग मूर्तियां हैं, उनमें से कुछ मूर्तियां ६ फुट ऊँची खड्गासनस्थ हैं। और कुछ चार-चार पांच-पांच फुट ऊँची हैं। उसी आंगन में चबूतरे पर प्राकृत भाषा का एक लेख भी उत्कीर्ण है जिसके अक्षर बिल्कुल घिस गए हैं। पढ़ने में नही आते। उस पर संवत् १००८ माघ सुदी ११ उत्कीर्णित है। इस मन्दिर के चारों ओर अनेक खण्डित मूर्तियाँ हैं। जिनसे मालूम होता है कि ये मन्दिर किसी भी समय साम्प्रदायिक वातावरण में अपनी श्री खो चुके हैं। स्थान अच्छा है, और मन्दिरों का समूह अतीतकाल के जैनियों की समृद्धि को सूचित करता है। यहाँ क्या क्या अतिशय हुआ हैं यह कुछ ज्ञात नही हुआ, किन्तु यह एक अतिशय क्षेत्र है। यहाँ जैनियों की संख्या अत्यल्प है। प्रति वर्ष फाल्गुन मास में रथोत्सव भी होता है।

श्री सोनागिरि सिद्ध क्षेत्र

ललितपुर से सोनागिरि आवे। यह पर्वत राज स्टेशन से तीन मील दूर है। कई धर्मशालायें हैं। नीचे तलहटी में १८ मंदिर हैं और पर्वत पर ७७ मन्दिर हैं। भट्टारक हरेन्द्रभूषण जी का मठ और भण्डार भी है। यह पर्वत छोटा सा अत्यन्त रमणीक है। यहां से नंग—अनंग कुमार साढ़े पाँच करोड़ मुनियों के साथ मुक्ति गए हैं। पर्वत पर सबसे बड़ा प्राचीन और विशाल मन्दिर श्री चन्द्रप्रभु स्वामी का है। इसमें ७॥ फीट ऊँची भ० चन्द्रप्रभु की अत्यन्त मनोज्ञ खड्गासन प्रतिमा विराजमान है। इसमें एक हिन्दी का लेख किसी प्राचीन लेख के आधार से लिखा गया है। जिससे प्रगट है कि इस मन्दिर को सं० ३३५ में श्री श्रवणसेन कनकसेन ने बनवाया था। इसका जीर्णोद्धार सं० १८८३ में मथुरा वाले सेठ लखमीचन्द जी ने कराया था। मन्दिरों पर

नम्बर पड़े हुए हैं, जिससे वन्दना करने में गलती नहीं होती। यहां की यात्रा करके ग्वालियर जाना चाहिये।

ग्वालियर

स्टेशन से दो मील दूर चम्पा बाग और चौक बाजार में दो पंचायती मन्दिरों में चित्रकारी का काम अच्छा है। यहाँ २० दि० जैन मंदिर और चैत्यालय हैं। ग्वालियर से लश्कर एक मील की दूरी पर है। वहाँ जाते हुये मार्ग में दो फलाँग के फासले पर एक पहाड़ है, जिसमें बड़ी २ गुफायें बनी हुई हैं। उनमें विशाल प्रतिमायें हैं। यहां से ग्वालियर का प्रसिद्ध किला देखने जाना चाहिए। किले में अनेक ऐतिहासिक चीजें देखने काबिल हैं। ग्वालियर के पुरातन राजाओं में कई जैन धर्मानुयायी थे। कच्छवाहा राजा सूरजसेन ने सन् २७५ में ग्वालियर बसाया था। वह गोपगिरि अथवा गोपदुर्ग भी कहलाता था। तोमर वंशी राजा डूंगर सिंह और उनके पुत्र राजा कीर्तिसिंह जी के समय में यहां जैनियों का प्राबल्य था। उपरांत परिहार वंश के राजा ग्वालियर के अधिकारी हुये। उनके समय में भी दि० जैन भट्टारकों की गद्दी वहां विद्यमान थी। उस समय के बने हुए अनेक जैन मन्दिर और मूर्तियां मिलती हैं। उनको बाबर ने नष्ट किया था। फिर भी कतिपय मन्दिर और मूर्तियां अखण्डित अवशिष हैं। सब से प्राचीन पार्श्वनाथ जी का एक छोटा सा मन्दिर है। पहाड़ी चट्टानों को काट कर अनेक जिन मूर्तियां बनाई गई हैं। यहां अधिकांश मूर्तियाँ श्री आदिनाथ भगवान की हैं। एक प्रतिमा श्री नेमिनाथ जी की ३० फीट ऊँची है। यहां से इच्छा हो तो भेलसा जाकर भद्दलपुर (उदयगिरि) के दर्शन करे।

भेलसा

कई जैनी भेलसा को ही दसवें तीर्थङ्कर श्री शीतलनाथ जी,

का जन्म स्थान अनुमान करते हैं। उनका वार्षिक मेला भी यहां होता है। किन्तु वास्तव में शीतलनाथ जी का जन्म स्थान कुलहा पहाड़ के पास भोंदल गाँव हैं। यहाँ एक बड़ा भारी शिखरबन्द मन्दिर प्राचीन है। इसके अतिरिक्त और भी कई मन्दिर और चैत्यालय हैं। यहां स्टेशन के पास दानवीर सेठ लक्ष्मीचन्द्र जी की धर्मशाला है। सेठ जी ने भेलसा में शिताबराय लक्ष्मीचन्द जैन हाई स्कूल भी स्थापित किया है। यहां से चार मील दूर उदयगिरि पर्वत प्राचीन स्थान है। वहाँ कई गुफाये हैं, जिनमें से नं० १० जैनियों की है। इस गुफा को गुप्त वंश के राजाओं के समय में उनके एक जैनी सेनापति ने जैन मुनियों के लिए निर्माण कराया था। वहां पार्श्वनाथ जी की प्रतिमा और चरण चिन्ह भी हैं। यहां से बौद्धों का सांची-स्तूप भी नजदीक है। भेलसा से वापस आगरा जावे। यहाँ से महावीर जी जावे।

श्री महावीर जी अतिशयक्षेत्र

श्री महावीर जी क्षेत्र महावीर जी स्टेशन से चार मील दूर है। यहां एक विशाल दि० जैन मन्दिर है, जिसमें मूलनायक भ० महावीर की अतिशय युक्त पद्मासन प्रतिमा विराजमान है। यह प्रतिमा जीर्ण हो चली है, इसीलिए उन्हीं जैसी एक और प्रतिमा विराजमान की गई है। मूल प्रतिमा नदी किनारे जमीन के अन्दर से किसी ग्वाले को मिली थी। जहां से प्रतिमा जी उपलब्ध हुई थीं, वहां पर एक छत्री और पादुकायें बनी हुई हैं। पहले यहाँ पर दि० जैनाम्नाय के भट्टारक जी सब प्रबन्ध करते थे, परन्तु उनकी मृत्यु के बाद जयपुर राज्य द्वारा नियुक्त दि० जैनों की प्रबन्धक कमेटी सब देख-भाल करती है। जब से कमेटी का प्रबन्ध हुआ है, तब से क्षेत्र की विशेष उन्नति हुई है और हजारों की संख्या में यात्री पहुंचता है। उत्तर भारत में इस क्षेत्र की बहुत

मान्यता है। मुख्य मन्दिर के अलावा ब्र० कृष्णाबाई का मन्दिर शान्ति वीरनगर के मन्दिर और ब्र० कमलाबाई का चैत्यालय हैं। यात्रियों के ठहरने के लिए यहां कई धर्मशालायें हैं।

सवाई माधोपुर (चमत्कार जी)

महावीर जी से सवाई माधोपुर जावे। यहां पर सात शिखरबन्द दि० जैन मन्दिर और चैत्यालय हैं। यहां से करीब १२ मील की दूरी पर रणथंभोर का प्रसिद्ध किला है, जिस के अन्दर एक प्राचीन जैन मंदिर है। उसमें मूलनायक चन्द्रप्रभु भगवान की प्रतिमा मनोज्ञ और दर्शनीय है। सवाई माधोपुर वापस आकर चमत्कार जी अतिशय क्षेत्र के दर्शन करना चाहिए। यह क्षेत्र वहाँ से दो मील है। इसमें एक विशाल मन्दिर और नशियां जी हैं। कहते हैं कि सम्वत् १८८९ में भ० आदिनाथ की स्फटिक मणि की प्रतिमा (६ इंच की) एक बगीचे में मिली थी। उस समय यहां केसर की वर्षा हुई थी। इसी कारण यह स्थान चमत्कार जी कहलाता है। यहां से यात्रियों को जयपुर जाना चाहिये।

जयपुर

जयपुर बहुत रमणीक स्थान है और जैनियों का मुख्य केन्द्र है। यहाँ दि० जैन शिखरबन्द मंदिर ५२, चैत्यालय ६८ और १८ नशियाँ बस्ती के बाहर हैं। कई मंदिर प्राचीन, विशाल और अत्यन्त सुन्दर हैं। बाबा दुलीचन्द जी का वृहद् शास्त्र भण्डार है जैन संस्कृत कालेज व कन्याशालादि संस्थायें भी हैं। जयपुर को राजा सवाई जयसिंह जी ने बसाया था। बसाने के समय राव कृपाराम जी (श्रावगी) दिल्ली दरबार में थे। उन्हीं की सलाह से यह शहर बसाया गया। यह अपने ढङ्ग का निराला शहर है। पहले यहां के राज दरबार में जैनियों का प्राबल्य था। श्री अमरचन्द जी आदि कई महानुभाव यहां के दीवान हुए थे। आजकल

भी यहां कई जैनी उच्च पदों पर नियुक्त हैं। मध्यकाल में जैन धर्म की विवेकमई उन्नति करने का श्रेय जयपुर के स्वनामधन्य आचार्यतुल्य पंडितों को ही प्राप्त है। यहाँ ही प्रातः स्मरणीय पंडित दीपचन्दशाह, पं० टोडरमल जी, पं० जयचन्द जी, पं० मन्नालाल जी, पं० सदासुख जी संघी, पन्नालाल जी प्रभृति विद्वान हुए हैं, जिन्होंने संस्कृत, प्राकृत भाषाओं के ग्रन्थों की टीकायें करके जैनियों का महान उपकार किया है। जयपुर के मंदिरों में अधिकाँश प्रतिमायें प्रायः संवत् १८१६, १८५१, १८६२ और १८६३ की प्रतिष्ठित विराजमान हैं। घी वालों के रास्ते में तेरापंथी पंचायती मंदिर सं० १७६३ का बना है, परन्तु उसमें प्रतिमायें १४ वीं १५ वीं शताब्दी की विराजमान हैं। सं० १८५१ में जयपुर के पास फागी नगर में बिम्बप्रतिष्ठोत्सव हुआ था। उस में अजमेर के भ० भुवनकीर्ति, ग्वालियर के भ० जिनेन्द्रभूषण और दिल्ली के भ० महेन्द्रभूषण सम्मिलित हुए थे। उनकी प्रतिष्ठा कराई हुई प्रतिमायें जयपुर में विराजमान हैं। एक प्रतिमा से प्रगट है कि सं० १८८३ में माघ शुक्ल सप्तमी गुरुवार को भ० श्री सुरेन्द्रकीर्ति के तत्वावधान में एक बिम्बप्रतिष्ठोत्सव खास जयपुर नगर में हुआ था। इस उत्सव को छावड़ा गोत्री दीवान बालचन्द्रजी के सपुत्र श्री संघवी रामचन्द्र जी और दीवान अमरचन्द्र जी ने सम्पन्न कराया था। साँगानेर, बाक्सू आदि स्थानों में भी नयाभिराम मन्दिर हैं। जयपुर के दर्शनीय स्थानों को देखकर वापस दिल्ली में आकर सारे भारत वर्ष के तीर्थों की यात्रा समाप्त करनी चाहिए।

इस यात्रा में प्रायः सब ही प्रमुख तीर्थ स्थान आ गये हैं फिर भी कई तीर्थों का वर्णन न लिखा जाना सम्भव है। 'दिगम्बर जैन डायरेक्टरी' में सब तीर्थों का परिचय दिया हुआ है विशेष वहां से देखना चाहिए।

प्रश्नावली

(१) हस्तिनापुर, मथुरा, अयोध्या, बनारस और पटना का कुछ हाल लिखो ?

(२) कुण्डलपुर, राजगृह और पावापुर का संक्षेप में वर्णन करो ?

(३) सम्मेदशिखर जैनियों का महान तीर्थ क्यों कहलाता है ? इस तीर्थ के बारे में जो कुछ तुम जानते हो विस्तार से लिखो।

(४) उदयगिरि और खण्डगिरि तीर्थों के विषय में तुम क्या जानते हो ? खारबेल का संक्षिप्त हाल लिखो ?

(५) बाहुबली और भद्रबाहु स्वामी के बारे में तुम क्या जानते हो ? श्रवणबेलगोल और मूड़बद्री तीर्थों का हाल लिखो।

(६) कारकल, कुन्थलगिरि, इलोरा की गुफाओं, मांगीतुंगी और गजपंथा का संक्षिप्त वर्णन लिखो ?

(७) पावागढ़, पालीताना, शत्रुंजय, गिरिनारजी, तारंगाजी और आबू पर्वत के तीर्थों के बारे में तुम क्या जानते हो ?

(८) श्री केशरियानाथ, बीजोल्या पार्श्वनाथ, सिद्धवरकूट, पावागिरि, बावनगजा जी, मक्सी पार्श्वनाथ, अन्तरीक्ष पार्श्वनाथ मुक्तागिरि, द्रोणगिरि, नैनागिरि खजुराहा, देवगढ़, चंदेरी, पपौरा, अहार, कुण्डलपुर अतिशय क्षेत्र, कम्पिला, सोनागिरि और महावीर जी अतिशय क्षेत्र कहां हैं ? उनका संक्षित परिचय लिखो ?

(९) जैन साहित्य के प्रचार में जयपुर के विद्वान पंडितों ने जो भाग लिया उसका संक्षेप में लिखो।

(१०) तीर्थक्षेत्र कमेटी—शिलालेख—मानस्तम्भ और भट्टारक से तुम क्या समझते हो ?

(११) जीर्णोद्धार किसे कहते हैं ? किन-किन जैन तीर्थों के जीर्णोद्धार की विशेष आवश्यकता है ? जीर्णोद्धार का कार्य नये मन्दिर बनवाने की अपेक्षा अधिक आवश्यक और महान् पुण्यबन्ध का कारण है—इसके पक्ष में कुछ लिखो।

(१२) तीर्थक्षेत्रों की उन्नति के कुछ उपाय बताओ ?

(१३) तीर्थयात्रा में एक यात्री की दिनचर्या और व्यवहार कैसा होना चाहिए ? उसे यात्रा में क्या-क्या सावधानी रखनी चाहिये ?

(१४) अप्रकट तीर्थ कौन-कौन से हैं और उनका पता लगाना क्यों आवश्यक है ?

(१५) तीर्थ क्षेत्रों की वन्दना करते हुए प्रत्येक यात्री को कैसी पवित्रता रखनी चाहिए, जिससे वह अपनी अन्तरात्मा को पवित्र बना सके।

उपसंहार

"श्री तीर्थपान्थरजसा विरजी भवन्ति,
तीर्थेषु विभ्रमणतो न भवे भ्रमन्ति।
तीर्थव्ययादिह नराः स्थिरसम्पदः स्युः,
पूज्या भवन्ति जगदीशमथार्चयन्तः ॥"

तीर्थ की पवित्रता महान है। आचार्य कहते हैं कि—श्री तीर्थ के मार्ग की रज को पाकर मनुष्य रज रहित अर्थात् कर्म-मल रहित हो जाता है। तीर्थ में भ्रमण करने से वह भव-भ्रमण नहीं करता है। तीर्थ के लिए धन खर्च करने से स्थिर सम्पदा प्राप्त होती है। और जगदीश जिनेन्द्र की पूजा करने से वह यात्री

जगतपूज्य होता है। तीर्थ यात्रा का यह मीठा फल है। इसकी उपलब्धि का कारण तीर्थ-प्रभाव है। तीर्थ वन्दना में विवेक शील मनुष्य हमेशा सदाचार का ध्यान रखता है। यदि सम्भव हुआ तो वह एकदफा ही भोजन करता है भूमिपर सोता है पैदलयात्रा करता है, सर्व सचित का त्याग करता है और ब्रह्मचर्य पालता है। जिन मूर्तियों की शान्त और वीतराग मुद्रा का दर्शन करके अपने सम्यक्त्व को निर्मल करता है, क्योंकि वह जानता है कि वस्तुतः प्रशमरुम को प्राप्त हुआ आत्मा ही मुख्य तीर्थ है। बाह्यतीर्थ वन्दना उस आभ्यन्तर तीर्थ—आत्मा की उपलब्धि का साधन मात्र है। इस प्रकार के विवेकभाव को रखने वाला यात्री ही सच्ची तीर्थ यात्रा करने में कृतकार्य होता है। उसे तीर्थ यात्रा करने में आरम्भ से निवृत्ति मिलती है और धन खर्च करते हुये उसे आनन्द आता है, क्योंकि वह जानता है कि मेरी गाढ़ी कमाई अब सफल हो रही है। संघ के प्रति वह वात्सल्य भाव पालता है और जीर्ण चैत्यादि के उद्धार से वह तीर्थ की उन्नति करता है। इस पुण्य-प्रवृति से वह अपनी आत्मा को ऊँचा उठाता है और सद्वृत्तियों को प्राप्त होता है।

मध्यकाल में जब आने जाने के साधनों की सुबिधा नहीं थी और भारत में सुव्यवस्थित राजशासन कायम नही था, तब तीर्थ यात्रा करना अत्यन्त कठिन था। किन्तु भावुक धर्मात्मा सज्जन उस समय भी बड़े बड़े संघ निकाल कर तीथयात्रा करना सबके लिए सुलभ कर देते थे। इन संघों में बहुत रुपया खर्च होता था और समय भी अधिक लगता था। इसलिए यह संघ वर्षों बाद कहीं निकलते थे। इस असुविधा और अव्यवस्था का ही यह परिणाम है कि आज कई प्राचीन तीर्थों का पता भी नही है और तीर्थों की बात जाने दीजिए, शासनदेव तीर्थङ्कर महावीर के जन्म, तप

और ज्ञान कल्याणक स्थानों को ले लीजिये। कहीं भी उनका पता नहीं हैं—जन्मस्थान कुण्डलपुर बताते हैं जरूर, परन्तु शास्त्रों के अनुसार वह कुण्डलपुर राजगृह से दूर और वैशाली के निकट था। इसलिए वह वैशाली के पास होना चाहिए। आधुनिक खोज से वैशाली का पता मुजफ्फरपुर जिले के बसाढ़ ग्राम में चला है। वहीं बसुकुण्ड ग्राम भी है। अतएव वहां पर शोध करके भ० महावीर के जन्म स्थान का ठीक पता लगाया जा चुका है। भगवान ने वहीं निकट में तप धारण किया था, परन्तु उनका केवलज्ञान स्थान जन्म स्थान से दूर जृम्भक ग्राम और ऋजकूला नदी के किनारे पर विद्यमान था। आज उनका कहीं पता नहीं है। बंगाली विद्वान स्व० नन्दूलालडे ने सम्मेद शिखर पर्वत से २५-३० मील की दूरी पर स्थित झरिया को जृम्भक ग्राम सिद्ध किया है और बराबर नदी को ऋजकूला नदी बताया है। झरिया के आस पास शोध करके पुरातत्व की साक्षी के आधार से केवलज्ञान स्थान को निश्चित करना अत्यन्तावश्यक है। इसी प्रकार कलिंग में कोटि-शिला का पता लगाना आवश्यक है। तीर्थयात्रा का यह महान् कार्य होगा, यदि इन भुलाये हुये तीर्थों का उद्धार हो सके।

सारांशतः तीर्थों और उनकी यात्रा में हमारा तन, मन, धन सदा निरत रहें, यही भावना भाते रहना चाहिये।

"भवि जीव हो संसार है, दुख-खार-जल-दरयाव।
तुम पार उतारन को यही है, एक सुगम उपाव॥
[illegible] को मल्लाह करि, निज रूप सौं लवलाव।
[illegible] 'कान्त' भीता, यही माला नाव॥"

परिशिष्ट १

यात्रियों को सूचनायें

१. यात्रियों को यात्रा में किसी के हाथ की वस्तु न खानी चाहिए और न प्रत्येक पर विश्वास करना चाहिए।

२. रेलवे स्टेशन पर गाड़ी आने के पहले पहुंच कर इत्मीनान से टिकट ले लेना चाहिये और उसके नं० नोट बुक में लिख लेना चाहिए। अपने सामान को भी गिन लेना चाहिए और कुली का नं० भी याद रखना चाहिये।

३. छुआछूत की बीमारियों से अपने को बचाते हुये स्वयं साफ-सुथरे रहकर यात्रा करनी चाहिये।

४. बच्चों की सावधानी रखनी चाहिये—उन्हें खिड़की के बाहर नहीं झाँकने देना चाहिये और न ही प्लेट फार्म या बाजार में छोड़ देना चाहिये। उनको जेवर नही पहनाना चाहिये।

५. अपने साथ रोशनी टार्च, लालटैन अवश्य रक्खें। साथ ही लोटा, डोर, चाकू, छड़ी, छत्री आदि जरूरी चीजें भी रक्खें।

६. शुद्ध सामग्री और 'जिनवाणी संग्रह' आदि पूजा स्तोत्र की पुस्तकें अवश्य रखनी चाहिये।

७. यात्रा में किसी भी प्राणी का जी मत दुखाओ। लूले, लंगड़ों और अपाहिजों को करुणा दान दो। तीर्थोद्धार में भी दान दो। किसी से भी झगड़ा न करो।

८. पर्वत पर चढ़ते हुए भगवान के चरित्र और पर्वत की पवित्रता को याद रखना चाहिए। इससे चढ़ाई खलती नही है।

९. ट्रेन में बेफिक्री से नही सोना चाहिये और न अपना रुपया किसी के सामने खोलना चाहिये और सब सामान अपने पास रक्खे।

१०. साथ में मजबूत ताला रक्खें, जो ठहरने के स्थान में लगावें।

११. खाने पीने का समान देखकर विश्वासपात्र मनुष्य से खरीदें। स्त्रियों और बच्चों को अकेले मत जाने दो।

१२. यात्रा में बहुत सामान मत खरीदो, यदि खरीदो तो पार्सल से घर भेज दो।

१३. यदि संयोग से कोई यात्री रह जाय तो दूसरे स्टेशन पर उतर कर तार करना चाहिये, उसे साथ लेकर चलना चाहिये।

१४. यदि किसी डिब्बे में अपना सामान रह जाय तो डिब्बे का नं० लिखकर तार करना चाहिये जिससे अगले स्टेशन पर वह उतार लिया जावे। प्रमाण देकर उसे वापिस ले लेना चाहिए।

१५. किसी भी पंडे या बदमाश का विश्वास नहीं करना चाहिये।

१६. कुछ जरूरी औषधियाँ और अमृतधारा, स्प्रिट, टिन्चर-आयोडीन भी साथ रखना चाहिये।

उत्तर प्रदेश के तीर्थ

वाराणसी
मुगलसराय
आरा
पटना
क्यूल
नाथनगर
मन्दारगिरी
राजगृह
गया
गिरिडीह
मधुपुर
सम्मेद शिखर
पारसनाथ
कलकत्ता
खड़गपुर
कटक
उदयगिरी
खंडगिरी
भुवनेश्वर

बिहार, बंगाल और उड़ीसा के तीर्थ

दक्षिण भारत के तीर्थ
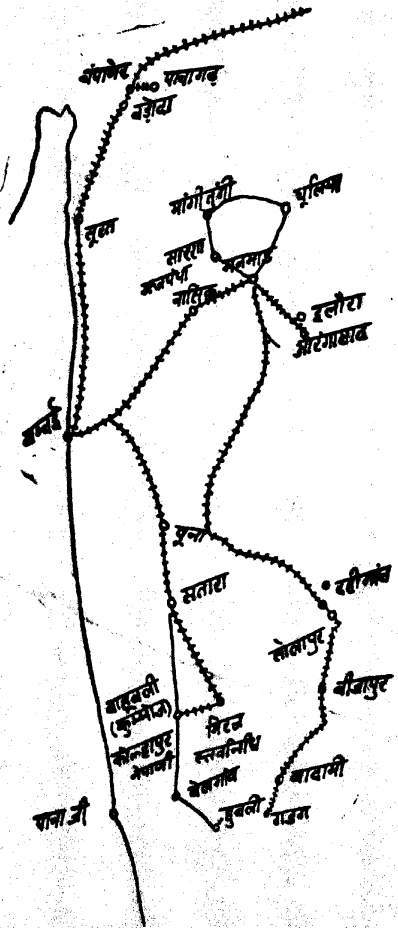
महाराष्ट्र राज्य के तीर्थ
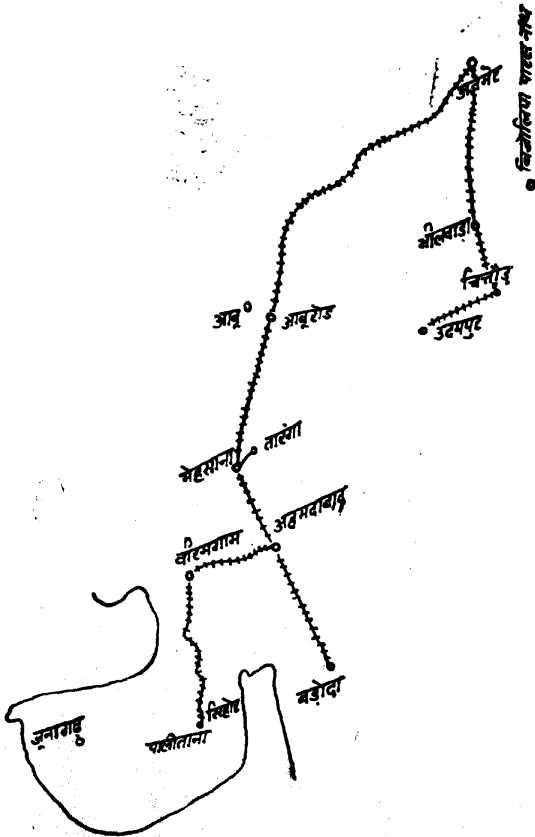
गुजरात व राजस्थान के तीर्थ

मध्य प्रदेश के तीर्थ

* तीर्थ स्थानों की अनुक्रमणिका *

भगवान् महावीर

२५०० वां

निर्वाण महोत्सव

दीपावली १९७४ से दीपावली १९७५ तक

(13-11-74 से 15-11-75 तक)

Famous Jain Literature

By **Champat Rai Jain Bar-At-Law**
and Other Prominent Writers.

		Rs. P.
The Key of Knowledge	C. R. Jain	25.00
Practical Dharma	"	1.50
House Holder's Dharma	"	1.50
Sanyas Dharma	"	1.50
Faith, Knowledge and Conduct	"	0.50
Atam Dharma	"	0.50
Rishabh Deva, the founder of Jainism	"	3.37
The Jaina Logic	"	0.25
The Jaina Psychology	"	0.75
Jainism and World Problems	"	2.00
Omniscience	"	0.25
The Mystery of Revelation	"	0.50
The Origin of the Swetambra Sect.	"	0.25
Appreciation end Reviews	"	0.50
The Confluence of Opposites	"	2.50
Christianity from the Hindu Eye	"	1.50
Lifting of the Veil or The Gems of Islam	"	2.00
" " " (Urdu)	"	1.12
The Change of Heart	"	2.50
A Scientific Interpretation of Christianity (Elisabeth Frasher)		3.00
Jainism not Atheism (Mr. H. Warren)		0.25
Gosmology Old and New (G. R. Jain M .Sc.)		5.00
Tatvartha Sutram (Edited by J. L. Jaini, Bar-At-Law)		5.00

To be had from :

A. I. Digambar Jain Parishad Publishing House,
204, Dariba Kalan. Delhi-110006.